बाराबंकी के अतिशयकारी

श्री चन्द्रप्रभ भगवान

स्तुति संग्रह

बाराबंकी दि. जैन मंदिर में विराजमान भगवान चन्द्रप्रभ

रचयित्री-गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

हस्तिनापुर में निर्मित विश्व की अद्वितीय जम्बूद्वीप रचना

गृहत्याग के समय बाराबंकी में कु. मैना अपने परिवार के साथ

ब्र. कु. मैना के साथ उनके पारिवारिक जन बाएं से दाएं हैं-ब्र. कु. मनोवती (आर्यिका श्री अभयमती माताजी), दो वर्षीय भाई रवीन्द्र जैन, माँ मोहिनी गोद में कन्या मालती को लिए हुए पिता श्री छोटेलाल जैन, बहन श्रीमती शांति देवी, श्रीमती श्रीमती देवी, कुमुदनी देवी, भाई प्रकाशचंद जैन, सुभाषचंद जैन-8 नवम्बर 1952, बाराबंकी

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं.-519
ISBN-978-93-87891-36-4

बाराबंकी के अतिशयकारी
श्री चन्द्रप्रभ भगवान
(स्तुति संग्रह)

–रचयित्री –

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी,
दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने आज से 68 वर्ष पूर्व सन् 1952 में जिस तिथि में त्यागमार्ग में बढ़ने के लिए घर से प्रस्थान किया था, उस दिन अर्थात् भादों कृष्णा चतुर्थी, वीर निर्वाण संवत् 2546 (7 अगस्त 2020) इस पवित्र तिथि के मंगल अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र., फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org, www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com, rk195057@yahoo.com

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2546	मूल्य
1100 प्रतियाँ	भाद्रपद कृ. चतुर्थी, 7 अगस्त 2020	20/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

-: मार्गदर्शन :-

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

-: निर्देशक एवं सम्पादकः-

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

-: प्रबंध सम्पादक :-

डॉ. जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

-कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुंदकुंदाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्।।

भगवान महावीर के शासनकाल में जैन समाज में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ऐसी साध्वी हैं, जिन्होंने जैन समाज में एक स्वर्णिम इतिहास रच दिया है। लगभग 500 ग्रंथों की रचना, 24 तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों का विकास, जैन भूगोल-जम्बूद्वीप रचना, तेरहद्वीप रचना, तीनलोक की रचना का शास्त्रोक्त निर्माण एक अद्भुत कार्य है। मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र में ऋषभगिरि पर 108 फुट उत्तुंग ऋषभदेव की प्रतिमा का निर्माण जैनधर्म की ध्वजा को आकाश की ऊँचाईयों तक पहुँचाने का एक ऐतिहासिक कार्य है।

पूज्य माताजी का हम सभी पर परम उपकार है, जो कि हमें नित्य नई-नई बातों से, प्राचीन रहस्यों से अवगत कराती हैं। इनके जीवन का हर पल नई-नई कृतियों को, नई-नई रचनाओं को लिए रहता है। जिनकी लेखनी में, वाणी में सरस्वती का वास है, तभी तो षट्खण्डागम सूत्र ग्रंथ की 16 पुस्तकों पर संस्कृत टीका लिखकर जैन समाज को एक महान कृति प्रदान की है। अष्टसहस्री जैसे क्लिष्ट ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद किया है। आज सारे विश्व में जिनके द्वारा रचित इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, सिद्धचक्र आदि विधानों की धूम मची है। जिन्हें चारों अनुयोगों का तलस्पर्शी ज्ञान है।

आज विद्वान भी अपनी शंका का समाधान करने के लिए पूज्य माताजी के पास आते हैं। माताजी प्रत्येक शंका का समाधान शास्त्र के आलोक में देती हैं। पूज्य माताजी के त्यागमार्ग पर बढ़ने की शुरूआत जहाँ से हुई, उस बाराबंकी नगरी के जिनमंदिर के प्रति पूज्य माताजी ने अपनी भक्ति प्रदर्शित करते हुए यह 'श्री चन्द्रप्रभ स्तुति संग्रह' पुस्तक लिखकर भक्तों को प्रदान की है। इस पुस्तक में लिखी स्तुतियों को भगवान के सामने पढ़कर आप सभी भी भगवान की भक्ति करें, यही मंगल भावना है।

नित्य नूतन निर्माण की प्रेरणास्रोत पूज्य माताजी चिरकाल तक सभी भव्यजीवों को अपना वरदहस्त प्रदान करते हुए मोक्षमार्ग में लगाती रहें, यही मंगल भावना है।

प्रस्तावना

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

श्री चन्द्रप्रभदेवस्त्वं, चंद्रकांतिसमप्रभः।
श्री चन्द्रप्रभदेवं त्वां, नमन्ति स्वसुखाप्तये।।

जैनधर्म के चौबीसों तीर्थंकर भगवान चमत्कारिक रहे हैं। जिनकी भक्ति, पूजा, आराधना से लोगों के कार्य सिद्ध हो जाते हैं। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के जीवन में भी श्री चन्द्रप्रभु भगवान की भक्ति करने का चमत्कार हुआ है, जिसे पूज्य माताजी ने स्वयं अपनी लेखनी से इस पुस्तक में लिखा है।

'श्री चन्द्रप्रभ स्तुति संग्रह' पुस्तक जो कि विशेषरूप से पूज्य माताजी ने बाराबंकी (जिला-उत्तरप्रदेश) में श्री दिगम्बर जैन मंदिर में विराजमान चमत्कारिक चन्द्रप्रभ भगवान के लिए लिखी है। इस पुस्तक में सर्वप्रथम पूज्य माताजी ने अनादिनिधन णमोकार मंत्र एवं चत्तारि मंगल पाठ दिया है। इसके बाद श्री गौतम स्वामी रचित जिनप्रतिमा स्तुति एवं थोस्सामि पाठ यानि चौबीस तीर्थंकर स्तुति दी है। पुनः श्री समन्तभद्रस्वामी रचित श्री चन्द्रप्रभ स्तुति दी है। इसके बाद स्वरचित श्री चन्द्रप्रभ स्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित), श्री चन्द्रप्रभ जिनस्तुति (हिन्दी काव्य) श्री चन्द्रप्रभ स्तोत्र (छदं सहित), श्री चन्द्रप्रभ स्तुति (संस्कृत एवं पद्यानुवाद) श्री बाहुबली स्वामी स्तुति (सप्त विभक्ति समन्वित) प्रथमाचार्यश्री शांतिसागर स्तुति, प्रथम पट्टाचार्यश्री वीरसागर स्तुति, आचार्य श्री देशभूषण महाराज की स्तुति दी है। स्तुति के बाद तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभ का जीवन दर्शन एक दृष्टि में एवं पुनः चन्द्रप्रभु का पूर्व भव सहित जीवन परिचय भी दिया है।

पुनः चतुर्विंशति जिनस्तोत्र (संस्कृत) एवं चौबीस जिनस्तुति (हिन्दी काव्य) में दी है जिसे अन्य किसी भी वेदी के आगे पढ़ सकते हैं। इसके बाद श्री महावीरजिनस्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित) एवं श्री वीरजिनस्तोत्र दिया है जिसे बगीची के मंदिर में भगवान महावीर स्वामी के सामने पढ़ने से सभी को उनकी महिमा ज्ञात होगी।

बाराबंकी में जो दूसरा छोटा मंदिर नाम से पार्श्वनाथ मंदिर है। उस मंदिर में विराजमान भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित) श्री पार्श्वनाथ का जीवन दर्शन एवं श्री पार्श्वनाथ स्तुति (संस्कृत एवं पद्यानुवाद सहित) दी है।

इसके बाद माताजी ने श्री चन्द्रप्रभ जिनप्रतिमा की महिमा बताते हुए सन् 1952 का अपने स्वर्णिम क्षणों का इतिहास लिखा है जिसे पढ़कर यह ज्ञात होता है कि बीसवीं सदी में सर्वप्रथम एक क्वांरी कन्या ने दीक्षा मार्ग में आने के लिए कितना पुरुषार्थ किया था और उनका यह पुरुषार्थ भगवान की भक्ति से सफल हुआ था।

अंत में प्रशस्ति दी है जिसमें माताजी ने लिखा है कि वीर निर्वाण संवत् 2545 में आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को इस पुस्तक का संकलन पूर्ण किया है। पूज्य माताजी का सन् 2019 का चातुर्मास जन्मभूमि टिकैतनगर में हुआ था, उस चातुर्मास से पूर्व माताजी बाराबंकी गईं थीं, वहाँ पर माताजी के सान्निध्य में श्री सतीश जैन-श्रीमती आदिमती जैन ने सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी बनकर इन्द्रध्वज विधान किया था। उस समय बाराबंकी जैन समाज ने पूज्य माताजी का सार्वजनिक रूप से भावभीना अभिनंदन किया, जो उनकी गुरुभक्ति एवं अपनी अमूल्य निधि के प्रति मूल्यांकन का परिचायक था।

यह पुस्तक छोटी होते हुए भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है अतः इसे पढ़कर भव्यजीव त्यागमार्ग में आगे बढ़ने के लिए पुरुषार्थ करें और बाराबंकी के चन्द्रप्रभ भगवान का अतिशय जानकर उनकी सच्चे मन से भक्ति करके एक दिन अपनी आत्मा को परमात्मा बनाने में सफल हों, यही मंगल भावना है।

अद्भुत महिमा-माँ ज्ञानमती की

—आर्यिका सुव्रतमती (संघस्थ)

ज्ञानगुणों की गरिमा है, इनकी अद्भुत महिमा है।
ब्रह्मचर्य का तेज आपका, शांत छवि की गरिमा है।।
युगप्रवर्तिका, चारित्रचन्द्रिका, गणिनी शिरोमणि कहलाईं।
बीसवीं सदी की प्रथम बाल, ब्रह्मचारिणी बन तुम आईं।।1।।

सन् उन्नीस सौ चौंतीस में, मोहिनी माँ से जाया है।
पितु श्री छोटेलाल की बगिया, को तुमने महकाया है।।
बाराबंकी नगरी में तुमने, ब्रह्मचर्य व्रत पाया है।
आचार्य देशभूषण जी से, गृहत्याग व्रत भी पाया है।।2।।

महावीर जी अतिशय क्षेत्र पर, वीरमती नाम पाया है।
माधोराजपुरा में तुमने, ज्ञानमती नाम पाया है।।
चारित्रचक्री शान्तिसागर, का दर्श आपने पाया है।
वीरसिंधु की शिष्या बन, भारत में अलख जगाया है।।3।।

हस्तिनापुर की पावन भू पर, जम्बूद्वीप बनाया है।
श्री शान्ति कुंथु औ अरनाथ की, जन्मभूमि महकाया है।।
तीर्थ अयोध्या, मांगीतुंगी का विकास करवाया है।
कोड़ाकोड़ी वर्ष प्राचीन, प्रयाग की याद दिलाया है।।4।।

तीर्थंकरों की जन्मभूमि, का विकास करवाया है।
कुण्डलपुर औ काकंदी, तीरथ को भी चमकाया है।।
वीर जन्म भू कुण्डलपुर में, नवनिर्माण कराया है।
लुप्त हो रहे तीरथ को, पुनः प्रकाश दिलाया है।।5।।

ग्रंथों की रचना के द्वारा, नव इतिहास बनाया है।
डी.लिट्. की उपाधि विश्व-विद्यालय गौरव पाया है।।
सरस्वती की प्रतिमूर्ति, शारद का रूप दिखाया है।
विदुषी, वागेश्वरि, वाग्देवि, आदि नाम को पाया है।।6।।

माँ के चरणों की धूलि बनूँ, मैं यही कामना करती हूँ।
मिले सदा आशीष आपका, यही भावना रखती हूँ।।
है यही प्रार्थना जिनवर से, ये प्रभा सदा दिन दूनी हो।
भारत माता की गोदी, इन माँ से कभी न सूनी हो।।7।।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान–टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि–आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति–अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र**–गोयल, **नाम**–कु. मैना

माता-पिता–श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत–ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा–चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा–वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व–अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 400 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि–सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को "डी.लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा–हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्मित 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा–पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि।

21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील एवं 22 अक्टूबर 2018 को ऋषभदेवपुरम्-मांगीतुंगी (महा.) में माननीय राष्ट्रपति श्री रामनाथ जी कोविन्द द्वारा पूज्य माताजी के ससंघ सान्निध्य में 'विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन' का उद्घाटन।

शैक्षणिक प्रेरणा–'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा–जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) आचार्य श्री शांतिसागर सम्मेदशिखर ज्योति रथ (2014) भगवान ऋषभदेव विश्वशांति कलश यात्रा रथ मांगीतुंगी (2015-2016) के दो रथों का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

विषयानुक्रमणिका

	विषय	पृ. संख्या
1.	णमोकार मंत्र एवं चत्तारि मंगल पाठ	9
2.	जिनप्रतिमा स्तुति एवं थोस्सामि स्तव	10
3.	श्री चन्द्रप्रभ स्तुति (श्री समंतभद्रस्वामिकृत)	11
4.	श्री चन्द्रप्रभ स्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित)	11
5.	श्री चन्द्रप्रभजिन स्तुति (हिन्दी-काव्य)	12
6.	श्री चन्द्रप्रभ स्तोत्र (छंद सहित)	13
7.	श्री चन्द्रप्रभ स्तुति (संस्कृत एवं पद्यानुवाद सहित)	14
8.	श्री बाहुबलि स्वामी स्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित)	22
9.	ह्रीं प्रतिमा की स्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित)	22
10.	प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर स्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित)	23
11.	प्रथम पट्टशिष्य आचार्य श्री वीरसागर स्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित)	23
12.	आचार्य श्री देशभूषण महाराज की स्तुति	24
13.	भगवान चन्द्रप्रभ का जीवन दर्शन	25
14.	तीर्थंकर चन्द्रप्रभदेव का जीवन परिचय	26
15.	चतुर्विंशतिजिनस्तोत्र (संस्कृत)	28
16.	चौबीसजिन स्तुति (हिन्दी काव्य)	30
17.	श्री महावीर जिनस्तुति	32
18.	श्री वीरजिन स्तोत्र	32
19.	श्री पार्श्वनाथ मंदिर वन्दना (द्वितीय मंदिर)	34
20.	श्री पार्श्वनाथ स्तुति (सप्तविभक्ति समन्वित)	34
21.	श्री पार्श्वनाथ का जीवन दर्शन	34
22.	श्री पार्श्वनाथ स्तुति (संस्कृत-पद्यानुवाद सहित)	35
23.	श्री चन्द्रप्रभ जिनप्रतिमा की महिमा (सन् 1952 का इतिहास)	39
24.	प्रशस्ति	46
25.	कु. मैना एवं माता मोहिनी का संवाद	47

श्री चन्द्रप्रभ स्तुति संग्रह

(श्री दिगम्बर जैनमंदिर-बाराबंकी)

णमोकार महामंत्र
एवं चत्तारिमंगल पाठ

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।।

चत्तारि मंगलं—अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहु मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरिहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

जिनप्रतिमा स्तुति

(श्री गौतमस्वामीकृत चैत्यवंदना)

यावन्ति संति लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च।
तानि सर्वाणि चैत्यानि, वंदे भूयांसि भूतये[1]।।

इस लोक– संसार में-मध्यलोक में जितनी भी अकृत्रिम और कृत्रिम जिनप्रतिमाएँ हैं, उन सभी जिनचैत्य– जिनप्रतिमाओं को हम स्वात्मसंपत्ति की प्राप्ति के लिए वंदना करते हैं, नमस्कार करते हैं।

थोस्सामि स्तवन (चौबीस तीर्थंकर स्तुति)

स्तवन करूँ जिनवर तीर्थंकर, केवलि अनंत जिन प्रभु का।
मनुज लोक से पूज्य कर्मरज, मल से रहित महात्मन् का।।1।।

लोकोद्योतक धर्म तीर्थकर, श्रीजिन का मैं नमन करूँ।
जिन चउबीस अर्हंत तथा, केवलि-गण का गुणगान करूँ।।2।।

ऋषभ, अजित, संभव, अभिनन्दन, सुमतिनाथ का कर वंदन।
पद्मप्रभ जिन श्री सुपार्श्व प्रभु, चन्द्रप्रभ का करूँ नमन।।3।।

सुविधि नामधर पुष्पदंत, शीतल श्रेयांस जिन सदा नमूँ।
वासुपूज्य जिन विमल अनंत, धर्मप्रभु शान्तिनाथ प्रणमूँ।।4।।

जिनवर कुन्थु अरह मल्लिप्रभु, मुनिसुव्रत नमि को ध्याऊँ।
अरिष्टनेमि प्रभु श्री पारस, वर्धमान पद शिर नाऊँ।।5।।

इस विध संस्तुत विधुत रजोमल, जरा मरण से रहित जिनेश।
चौबीसों तीर्थंकर जिनवर, मुझ पर हों प्रसन्न परमेश।।6।।

कीर्तित वंदित महित हुए ये, लोकोत्तम जिन सिद्ध महान् ।
मुझको दें आरोग्यज्ञान अरु, बोधि समाधि सदा गुणखान।।7।।

चन्द्र किरण से भी निर्मलतर, रवि से अधिक प्रभाभास्वर।
सागर सम गंभीर सिद्धगण, मुझको सिद्धी दें सुखकर।।8।।

1. चैत्यभक्ति से।

श्रीचन्द्रप्रभजिनस्तवनम्

(श्री समन्तभद्रस्वामि कृत)

-उपजाति छंद-

चन्द्रप्रभं चन्द्र-मरीचि-गौरं, चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम्।
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं, जिनं जित-स्वान्त-कषायबन्धम्।।1।।

यस्याङ्ग-लक्ष्मी-परिवेष-भिन्नं, तमस्तमोऽरेरिव रश्मि-भिन्नम्।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च, ध्यान-प्रदीपाऽतिशयेन भिन्नम्।।2।।

स्व-पक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता, वाक्-सिंहनादैर्विमदा बभूवुः।
प्रवादिनो यस्य मदाऽऽर्द्र-गण्डा, गजा यथा केशरिणो निनादैः।।3।।

यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः, पदं बभूवाऽद्भुत-कर्म-तेजाः।
अनन्त-धामाऽक्षर-विश्वचक्षुः, समन्त-दुःख-क्षय-शासनश्च।।4।।

स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां, विपन्न-दोषाऽभ्रकलङ्क-लेपः।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः, पूयात् पवित्रो भगवान् मनो मे।।5।।

श्री चन्द्रप्रभ स्तुतिः

(सप्तविभक्ति समन्वित)

श्रीचन्द्रप्रभदेवस्त्वं, चंद्रकांतिसमप्रभः।
श्रीचन्द्रप्रभदेवं त्वां, नमन्ति स्वसुखाप्तये।।1।।

श्रीचन्द्रप्रभदेवेन, मोहध्वांतमपाकृतं।
श्रीचन्द्रप्रभदेवाय, नमः स्वात्मगुणाप्तये।।2।।

श्रीचन्द्रप्रभदेवात् हि, ज्ञानदीधितयः स्फुटाः।
श्रीचन्द्रप्रभदेवस्य, भासंते भाक्तिकाः भुवि।।3।।

श्रीचन्द्रप्रभदेवेऽहं, दधे नित्यं स्वमानसं।
श्रीचन्द्रप्रभदेव! त्वं, मह्यं देहि स्वसंपदं।।4।।

सम्यग्ज्ञानमती प्राप्त्यै, केवलं त्वत्पदद्वयम्।
आश्रयामि स्मरामि च, संततं भक्तिभावतः।।5।।

श्री चन्द्रप्रभजिन स्तुति

भव वन में घूम रहा अब तक, किंचित् भी सुख नहिं पाया हूँ।
प्रभु तुम सब दुःख के ज्ञाता हो, अतएव शरण में आया हूँ।।
सुरपति गणपति नरपति नमते, तव गुणमणि की बहुभक्ति लिए।
मैं भी नत हूँ तव चरणों में, अब मेरी भी रक्षा करिये।।1।।

काशी में चन्द्रपुरी सुन्दर, रत्नों की वृष्टि खूब हुई।
भू धन्य हुई जन धन्य हुए, पितु-मात के हर्ष की वृद्धि हुई।।
राका शशांक सम कांत तनु, धवलोज्ज्वल कांति यशोधारी।
चिंतित फलदाता चिंतामणि, औ कल्पतरू भी सुखकारी।।2।।

तिथि चैत्रवदी पंचमी कही, औ पौष वदी ग्यारस सुखदा।
फिर पौष वदी ग्यारस उत्तम, औ फाल्गुन वदि सप्तमी शुभा।।
फाल्गुन सुदि सप्तमि ये तिथियाँ, क्रम से पाँचों कल्याणक की।
चन्द्रप्रभ! पंचकल्याणकपति! मुझको दें पंचम सिद्धगती।।3।।

जिस वन में ध्यान धरा प्रभु ने, उस वन की शोभा क्या कहिए।
जहाँ शीतल मंद पवन बहती, षट् ऋतु के कमल खिले लहिए।।
सब जात विरोधी गरुड़ सर्प, मृग सिंह खुशी से झूम रहे।
सुर खेचर नरपति आ आकर, मुकुटों से जिन पद चूम रहे।।4।।

महासेन पिता भी पूज्य हुए, जननी लक्ष्मणा पवित्र हुयी।
दशलाख वर्ष पुर्वायू थी, छह सौ करतुंग शरीर सही।।
शशि लांछनयुत भ्रम तम हरते, यश ज्योत्स्ना फैली जग में।
कैवल्य ''ज्ञानमती'' संपद दो, मैं नमूँ सदा तव चरणों में।।5।।

श्री चन्द्रप्रभ स्तोत्र

उपस्थिता छन्दः—(11 अक्षरी)

संसार-वने भ्रमता हि देवेट्। लेशोऽपिसुखं नहि लब्धमेव।
त्वं वेत्सि च मेऽखिलदुःखमाप्तं, चन्द्रप्रभ! मामवतात्त्वरं वै।।1।।

एकरूप छन्दः—(11 अक्षरी)

काश्यां चंद्रपुरे सुरत्नवृष्ट्या, पृथ्वी धन्यवती जनाश्च धन्याः।
पित्रोर्हर्षमवर्धयन् हि चैत्रे, पंचम्या-मसितेऽवसत् स गर्भे।।2।।

इन्द्रवज्रा छन्दः—(11 अक्षरी)

जन्माभिषेकः सुरशैलमूर्ध्नि, जातः प्रभोश्चन्द्रजिनस्य यस्यां।
सैकादशी मे भव पौषकृष्णा, सूः लक्ष्मणा मंगलदायिनी च।।3।।

उपेन्द्रवज्रा छन्दः—(11 अक्षरी)

शशांककान्तोज्ज्वलदेहधारी, तथाप्यदेहः शिवधाम्न्यतिष्ठत्।
विरागमोहोपि निजात्मरक्तः, प्रभुः स मे मोहतमोहरः स्यात्।।4।।

उपजाति छन्दः—(11 अक्षरी)

जन्मप्रसिद्धे दिवसे जिनेशः, दिगम्बरोऽभूत् परिहृत्य ग्रन्थिं।
कैवल्यलाभेन हि सप्तमी स्यात्, पूता प्रसिद्धासितफाल्गुनी या।।5।।
तन्मासि शुक्ला किल सप्तमी या, तस्यां विमुक्तोऽखिलकर्मदूरः।
ज्ञानैकसिंधुर्भुवनैकबंधुः, जिनः स मेऽन्तः सततं निषीद।।6।।

सुमुखी छन्दः—(11 अक्षरी)

सुरपतयः प्रणमंति सदा, गणपतयोऽनुसरंति मुदा।
मुनिपतयः कवयंति गुणान्, मयि विनते कुरु त्वं करुणां।।7।।

दोधक छन्दः—(11 अक्षरी)

चन्द्रजिनो भवतापहरस्त्वं, चिंतितवस्तुसुदाने दक्षः।
कल्पतरुर्जिन! हीप्सितदाता, नौमि सदा मम सिद्धिविधाता।।8।।

अनुष्टुप् छन्दः—

शून्यषट्कैकपूर्वायुः, सार्द्धचापशतोच्छ्रितिः।
महासेनात्मजः पायात्, स जिनश्चंद्रलाञ्छनः।।9।।

श्री चन्द्रप्रभ स्तुतिः

-भुजंगप्रयातं छंदः-

मुनीनां मनोवार्धिराकासुधांशुः।
मनोभूविजेता मनोध्वांतहारी।।
चलच्चित्तसंचारहान्यै सदा तं।
मुदा स्तौमि चन्द्रप्रभं चंद्रकांतं।।1।।

मुनिमन समुद्र वर्धन को शशि, मदनजयी मन तमहारी।
चपलचित्त गति हरन हेतु, चन्द्रप्रभ स्तुति सुखकारी।।1।।

भवव्याधिशान्त्यै स सर्वोषधिः स्यात्।
सुकैवल्यबोधाधिनाथः कलाभृत्।।
महामोहनैशांध-कारांशुमाली।
श्रितानां यशोवार्धिपूर्णैकचन्द्रः।।2।।

भवव्याधिशम को सर्वौषधि, केवलज्ञान के अधिनायक।
महामोह निश अंधकार रवि, आश्रित जन यश वर्धनविधु।।2।।

शशांकांघ्रिसेव्यः परां शांतिमाप्तः।
भवेद्भव्यजंतोर्भवाग्निप्रशान्त्यै।।
यतीनां मनो-ऽम्भोजभास्वान् प्रभुस्तं।
सुचंद्रप्रभं नौमि चंद्रांशुगौरं।।3।।

शशि सेवितपद परमशांतियुत, भव्य भवाग्नी शांत करो।
यति मन कमल विकासी शशि सम, धवल वर्ण नमुं चंद्रप्रभो!।।3।।

पुरस्तात् सुभक्त्येरितोऽज्ञोऽपि किंचित्।
ब्रुवे तद्भवेत्केवलं जन्महान्यै।।
स्मृतिस्तेऽप्यनंतानि दुःखानि हंति।
न किं हंति नागान् शिशुः सिंहिकाया।।4।।

अज्ञ हूँ फिर भी भक्ति से प्रेरित, कुछ भी स्तव वह भव नाशक।
स्मृति भी तव अनंत दुःखहर, नहिं क्या सिंहशिशु गज मारक।।4।।

प्रभो! त्वां विलोक्य प्रहृष्टं मनो मे।
ध्वनिर्गद्गदो मोदवाष्पस्रवंत्यौ।।
दृशो स्तश्च साफल्य-जन्मापि मेऽभूत्।
अतः कुड्मलीकृत्य हस्तौ प्रणौमि।।5।।

प्रभु तुम देखे मन हर्षित, वाणी गद्गद् अरु नयनों से।
हर्षाश्रु झरते मम जन्म सफल, हैं नमुं अंजलि करके।।5।।

चतुः साधिकाशीति-लक्षप्रमासु।
भ्रमन्योनिषु व्याप्तदुःखासु कृच्छ्रात्।।
अवाप्तः प्रभो! धर्मपोतः शुभस्ते।
कृपायास्तितीर्षामि संसारवार्धि।।6।।

अनन्त दुःख से व्याप्त योनि, चौरासी लक्ष में फिर-फिर कर।
पाया धर्म जहाज प्रभो! तव कृपा से तरना भवसागर।।6।।

परावर्तनान्य-प्यनंतानि पूर्वं।
कृतानि श्रमोऽभू-दिदानीमतीव।
त्वमेव प्रभो! पंचसंसारमुक्तः।
अतः प्रार्थये त्वां शृणु त्राहि देव!।।7।।

किये अनंत पंच परिवर्तन, अब थकान है बहु मुझको।
तुम परिवर्तन मुक्त अतः, विनती सुन रक्षा करो विभो।।7।।

कलैकापि कालस्य न त्वद्विना स्यात्।
विभो! कालचक्राद्विमुक्तस्त्वमेव।।
कलासर्वपूर्णस्त्रिलोकैकचंद्रः।
मया स्तूयसे निष्कलः क्षीरवर्णः।।8।।

काल चक्रसे रहित! न तुम-बिन कला काल की इक जावे।
पूर्ण सब कला त्रिजगचंद्र! तनुरहित धवल! तव गुण गायें।।8।।

प्रभो! चंद्र! ते चन्द्रिकाव्याप्तसर्वा-
सभादुग्धसिंधौ प्लवंतो विपापाः।।
गणद्वादश-ख्यात-भव्या विरेजुः।
सदा ते नमः स्वात्मनैर्मल्यसिद्ध्यै।।9।।

चंद्र! तेरी चाँदनी सभा पय, सिंधु में न्हाकर हो निष्पाप।
बारह सभा भविक शोभें-प्रभु, नमूँ स्वात्म निर्मलता काज।।9।।

क्रुधं शांतभावेन मानं मृदुत्वात्।
ऋजुत्वेन मायां शुचित्वाच्च लोभं।।
विशस्त्रो जयी कंतुजित् कांतिमांश्च।
स दोषाकरो-प्यस्तदोषः स्तुवे तं।।10।।

क्रोध शांति से मद मृदुता से, छल ऋजुता से शुचि से लोभ।
बिना शस्त्र जीता स्मरजित्! दोषाकर फिर भी निर्दोष।।10।।

घनाच्छादिस्त्वं न नो ग्रस्तराहुः।
त्वमेवासि नक्तंदिवा सुप्रकाशी।।
कलानां क्षयो नास्त्यपूर्वो जनानां।
मनश्चंद्रकांतोपल-स्यंदिचन्द्रः।।11।।

मेघाच्छादित राहु ग्रसित, नहिं रात्रिदिवस प्रकाश करें।
कला न घटती प्रभु से जन मन, चंद्रकांतमणि दुग्ध झरें।।11।।

मुखं कांतिमत्ते विलोक्यानुमन्ये।
शुचैव प्रजातः क्षयींदुस्ततः सः।।
क्रमाद्धीयमानश्च रात्रावुदेति।
सदोदेषि त्वं द्योतितालोकसर्वः।।12।।

प्रभु तव मुख को देख शोच से, शशि क्षय रोगी हुआ है क्या?
घटती कला उगे निश में, सब जगोद्योति तुम उदित सदा।।12।।

रविर्व्याप्तभूमंडलोंऽशुप्रसारैः।
जगत्तापकृच्-चन्द्रमास्तापहृच्च।।
यमातापहृच्चन्द्रनाथस्त्वमेव।
ऋषीणां सदः कैरवोत्फुल्लताकृत्।।13।।

रवि किरणें जगतापकरी रवि, तापहरन शशि, पर जग में।
ऋषिकुल कुमुद प्रफुल्लित चंद्र! मृत्युतापहर तुम्हीं बने।।13।।

प्रभाचक्रकान्त्या जितः सत्रपः सन्।
कलंकं प्रमार्ष्टुं श्रितो निष्कलंकं।।

न चेत्त्वत्पदाम्भोरुहौ सत्कुटुम्बः।
कथं सेवते सर्वदा पादलग्नः।।14।।

भामंडल छवि से लज्जित, आया कलंक धोने तुम पास।
यदि ऐसा नहिं सकुटुंबी क्यों, तव पद में नित करे निवास।।14।।

अनित्यो हि जीवस्तथा नित्य एव।
क्रिया तर्हि मुक्त्यै न कस्यापि भूयात्।
कथंचित्तव न्यायशैलीं श्रितानां।
त्वरं त्वत्पदं स्यान्न मिथ्यादृशां तत्।।15।।

जीव नित्य ही या अनित्य ही, क्रिया मोक्ष कर नहिं उनके।
तव मत "स्यात्" के आश्रय से, शिवलहें, न शिव मिथ्यामत से।।15।।

गुणानामभावो यदीष्येत मुक्तौ।
किमर्थं भवेन्मोक्षलिप्सा मुनीनां।।
पुनर्जन्म चेन्मुक्तपुंसां कथं स्यात्।
सुखज्ञानदृग्वीर्यसंपत्त्यनंताः।।16।।

यदि मुक्ति में नाश गुणों का मुक्तीच्छा क्यों मुनिजन के।
यदि पुनरावतार हो तो, सुख ज्ञानादि अनंत कैसे।।16।।

शरीरेन्द्रियाद्या धराभूराद्याः।
कृता बुद्धिमद्धेतुका सद्मवत् स्युः।।
प्रसाध्येत कार्यत्वतः सृष्टिकर्त्ता।
न तच्चारु यद्विश्व-माद्यंतशून्यं।।17।।

तनु संसार आदि बुद्धिमत, ईश्वर हेतुक महल समान।
परमत सृष्टि ईश कृत नहिं सच, क्योंकी जगत है नादि अनंत।।17।।

-शिखरिणी छंदः-

शरीरीर प्रत्येकं भवति भुविः वेधाः स्वकृतितः।
विधत्ते नानाभू-पवन-जल-वन्हि-द्रुमतनुं।।
त्रसो भूत्वा-भूत्वा कथमपि विधायात्र कुशलं।
स्वयं स्वस्मिन्नास्ते भवति कृतकृत्यः शिवमयः।।18।।

तव मत में प्रत्येक जीव, निज निज कृति से स्रष्टा बनता।
भू जल वायू अग्नि वनस्पति, विविध-विविध निज तन रचता।।
विकलत्रय, पंचेन्द्रिय बन बन, कभी शुभ से नर तन पाया।
यदी निजातम ध्यान किया, कृतकृत्य हुआ शिवपद पाया।।18।।

-पृथ्वी छंद-

विचित्र-भुवनत्रयं यदि कदाचि-दीशः सृजेत्।
जगद्धि सकलं शुभं निखिलदोष-शून्यं न किं।।
निगोदनरकादि-दुर्गतिकृतिश्च दुष्टाय चेत्।
कथं पुन-रधर्मिणां विहितसृष्टि-रन्यायियिनी।।19।।

यदी कदाचित् त्रिभुवन का कर्त्ता, ईश्वर को मानें तो।
सकल जगत सब दोष रहित, शुभ रूप कहो फिर क्यों नहिं हो।।
निगोद नरकादिक रचना यदि, कहो दुष्ट जन के लिए है।
क्यों कर दुष्टों की सृष्टि की, पाप की सृष्टि भी क्यों है।।19।।

न युज्यत इयं कृतिः सकलजंतु-कारुण्यतः।
कुतूहलधियापि चेन्न महतां हि संभाव्यते।।
अदृष्ट-परिकल्पनापि जिन! नो भवेत्त्वद्द्विषां।
अतश्च भवतो विना क्वचि-दीपश्वरत्वं कथं।।20।।

परम कारुणिक जगत्पिता को, दुःखियों की सृष्टि नहिं युक्त।
कौतूहल से रचें कहो नहिं, बुध जन को कौतूहल इष्ट।।
जनके भाग्योदय से सृष्टि, मिथ्यामत में बने नहीं।
अतः नाथ! आपके बिन, अन्यत्र ईशपन घटे नहीं।।20।।

शशांकधवलो-ज्ज्वलान् तव गुणान् गृणन् शुद्धधीः।
महर्षिरपि नो प्रभुः पुनरहं कथं शक्नुयाम्।।
मनागपि तव स्तवः कटुककर्म-हान्यै ततः।
नमोस्तु जिनचंद्र! ते सकलताप-विच्छित्तये।।21।।

शशिसम धवल गुण स्तुति में, तव महर्षि भी असमर्थ रहें।
मैं फिर कैसे समर्थ होऊँ, नहिं बुद्धि किंचित् मुझमें।।

तथापि किंचित् संस्तव तेरा, अशुभ कर्म विध्वंसक है।
हे चन्द्रप्रभ! नमोस्तु तुमको, सकल ताप संहारक हैं।।21।।

-द्रुतविलंबित छन्दः-

ज्ञपयतीति जिनाधिप! सांख्यकः।
पृथ-गवैति च पुंप्रकृती यदा।।
व्रजति तत्क्षण एव शिवं जनः।
त्रितयरत्न-महो! किमु कः श्रयेत्।।22।।

सांख्य कहें जब पुरुष प्रकृति का, भेद ज्ञान होता जनको।
तत्क्षण मुक्ती मिले अहो! फिर कौन ग्रहे रत्नत्रय को।।22।।

द्वयनयाश्रित-मुक्तिपथं ध्रुवं।
अनुसरन् भगवान् भवति व्रती।।
जगति दुर्ग्रहिभिर्नहि लभ्यते।
जयति जैनमतं नियतं सदा।।23।।

द्वय नय आश्रित ही शिवपथ को, व्रती ग्रहण कर हो भगवान।
नहिं मुक्ति है दुराग्रही को, जयति सदा ही जिन शासन।।23।।

स्वपरभेद-विबोधवती प्रमा,
यदि भवेच्चरणं प्रभवेत्तदा।
निजसुखामृत-पान-सुतृप्तितः,
परमसौख्य-सुधां स्वदते यतिः।।24।।

स्वपर भेद विज्ञान यदि है, चरित्र भी होता निश्चित।
स्वात्म सुखामृत पीकर यदि जन पाते पूर्ण सौख्य अमृत।।24।।

निरतिचार-चरित्र-सुपालनात्,
द्वितय-शुद्धनयाश्रित-मात्मनं।
अनुभव-त्यनिशं हृदयाम्बुजे,
लभत एव विभो! स्वसुखास्पदं।।25।।

निरतिचार चारित पालन कर, निश्चयनय से स्वात्मा को।
हृदय कमल में नित अनुभवते, पाते वही मोक्ष सुख को।।25।।

परमचिद्घन-शुद्धमयात्मनि,
यदि धृतिः कथ-मप्यवतिष्ठते।
स्वयमयं स्वविशुद्ध-शशांकजित्,
अतुल-कांतिभरो भुवि भास्यते।।26।।

परमशुद्ध चिद्घन आत्मा में, यदि मन कथमपि हो स्थिर।
स्वयं शुद्धमय अतुल कांतिभर, शोभे यह जग में सुखकर।।26।।

जनिजरा-मरणप्रभृतेः प्रभो!,
पृथगहं स्वयमेव चिदात्मकः।
नहि विशुद्धिनयाद् विकृतिर्मयि,
कथमपि प्रभवेद् जिन! सिद्धवत्।।27।।

प्रभु मैं जन्म जरा मरणादिक से हूँ पृथक् स्वयं चिद्रूप।
निश्चय नय से नहिं विकार, मुझमें मैं सिद्ध सदृश सुखरूप।।27।।

भवति तुष्टिकरेय-मपीह वित्,
किमु पुनर्यदि सिद्धि-मवाप्नुयाम्।
त्वदिव स्वं ध्ययनान्मयि सिद्धता,
लघु भवेद्यदि हृत्वयि लीयते।।28।।

"तुम सम मैं" यह बुद्धि तुष्टिप्रद फिर क्या यदि सिद्ध बने सच में।
तव ध्यान से सिद्धी झट होवें, यदि चित्त लीन होवे तुझमें।।28।।

धनदयक्षकृते सदसि स्थितः,
उडुयुतः शशिवज्जिनचंद्रमाः।
द्विदशसभ्यगणैः प्रविराजते,
दिशति सार्ववृषं शिवकारिणं।।29।।

कुबेर निर्मित समवसरण में, तारागणयुत शशि सम आप।
द्विदश सभा बिच सर्व जीव हित, करे देशना शोभें नाथ!।।29।।

जिनपते! दुरितंजय! सौम्यभृत्!,
स्मरजयिन्! करुणाहृद! कर्मभित्।
त्रिभुवनाधिप! मे हृदि तिष्ठ भोः!,
अव भवाद् भवि-कैरवचंद्रमः!।।30।।

मदनजयी जिनपति! दुरितंजय, कर्ममर्मभित्। करुणाह्रद!
हे त्रिभुवनपति मम हृदि तिष्ठो, भव से रक्षा करो जिनेन्द्र!।।30।।

जिनरवे! जिनचंद्र! जिनेन्द्र! हे!
कुरु कृपां शरणागतवत्सल!
भवत उद्धर हे जिनपुंगव!
भवमहोदधितारक! पाहि मां।।31।।

जिनेन्द्र! जिनरवि! जिनचंद्र! शरणागत वत्सल कृपा करो।
हे जिनपुंगव! भवदधि तारक! झट भवदधि से पार करो।।31।।

सुरकृता सुमवृष्टिरिति त्वयि,
उडुगणश्च पतन् किमु भाति खात्।
तव पदाम्बुजभक्तिसुमावलिः,
शिवसुखाय मयापि समर्प्यते।।32।।

सुर कृत पुष्पवृष्टि यह मानो, तारे गण आये नभ से।
मैं भी शिव हेतु करूँ अर्पण, तव पद भक्ति कुसुमावलि ये।।32।।

-शार्दूलविक्रीडित छंदः-

मुक्तिश्री-ललनापतिः शुभशरत्पूर्णैकचंद्रो जिनः।
मोहैकाहिविष-प्रमूर्च्छित-जनान् पुष्यन् सुधावर्षणैः।।
श्रीचंद्रप्रभ एष चेत्खलु मया स्तूयेत भक्त्या मयि।
पूर्णज्ञानमतीव तर्हि परमानंदात्मकं प्रस्फुरेत्।।33।।

हे मुक्ति श्री रमापते! शरद्-ऋतुपूर्ण चंद्र! जिनचंद्र।
मोह सर्प विषमूर्च्छित जन को, सुधा वृष्टि कैसे करते पुष्ट।।
यदि चंद्रप्रभ संस्तुति भक्ति, से मुझसे की जावे नाथ!
पूर्ण 'ज्ञानमति' परमानंद सुख, का मुझ में हो स्वयं विकास।।33।।

श्री बाहुबलि स्वामी स्तुतिः

(सप्तविभक्ति समन्वित)

बाहुबली चक्रजित् त्वं, जैनी दीक्षां गृहीतवान्।
बाहुबलिजिनं नौमि, स्वस्य कायबलर्द्धये।।1।।

बाहुबलि जिनेनात्र, वर्षैकयोगमाश्रितः।
बाहुबलिजिनायास्मै, नमोऽस्तु स्वात्मसिद्धये।।2।।

बाहुबलिजिनादस्मात्, ध्यानसिद्धिः प्रजायते।
बाहुबलिजिनस्येह, लोके बिम्बानि भान्त्यपि।।3।।

बाहुबलिजिने भक्तिः, मे भूयात् शक्तिवर्धिनी।
बाहुबलिजिन! त्वं मां, पाहि संसारवार्धितः।।4।।

ह्रीँ कार स्तुति

(सप्तविभक्ति समन्वित)

ह्रीँ कारोऽयं महामंत्रः, सर्वविघ्नविनाशकः।
ह्रीँ कारं सर्वमंत्रेषु, मान्यं वदन्ति साधवः।।1।।

ह्रीँ कारेण पिशाचाद्याः, पलायन्ते क्षणादिह।
ह्रीँ काराय मुदा नित्यं, त्रेधा भक्त्या नमो नमः।।2।।

ह्रीँ कारात् सर्वमंत्राश्च, भवन्ति शक्तिशालिनः।
ह्रीँ कारस्य महाशक्तिं, मुनीन्द्राः कथयन्त्यपि।।3।।

ह्रीँ कारे मे मनो नित्यं, स्थिरीभूतं भवेत् सदा।
ह्रीँ कार! मोक्षबीज! त्वं, मां रक्ष सर्वव्याधितः।।4।।

चारित्रचक्रवर्ती प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर स्तुतिः

(सप्तविभक्ति समन्वित)

श्रीशान्तिसागरः सूरिः, प्रथमाचार्य इष्यते।
श्रीशान्तिसागराचार्यं, श्रयामि वृत्तलब्धये।।1।।

श्रीशांतिसागरेणात्र, मुनिमार्गः प्रदर्शितः।
श्रीशान्तिसागरायाद्य, कोटिशो मे नमो नमः।।2।।

श्रीशान्तिसागराचार्यात्, जाता धर्मप्रभावना।
श्रीशान्तिसागरस्येह, भाक्तिका मोक्षमार्गिणः।।3।।

श्रीशान्तिसागराचार्ये, समाविष्टा गुणा यतेः।
हे शान्तिसागराचार्य! मामुद्धर भवाब्धितः।।4।।

चारित्रचूड़ामणि आचार्य श्री वीरसागर स्तुतिः

(सप्तविभक्ति समन्वित)

श्रीवीरसागराचार्यः, पट्टसूरिर्हि विश्रुतः।
श्रीवीरसागराचार्यं, वंदे भक्त्या पुनः पुनः।।1।।

शिष्याः सुशिक्षिताः नित्यं, वीरसागरसूरिणा।
नमोऽस्तु भक्तिभावेन, वीरसागरसूरये।।2।।

श्रीवीरसागराचार्यात्, ख्याता पट्टपरम्परा।
श्रीवीरसागरस्यापि, गांभीर्यादिगुणाः स्थिताः।।3।।

श्रीवीरसागराचार्ये, विद्वान्सोऽपि नता मुदा।
श्रीवीरसागराचार्य!, कृपां कृत्वा पुनीहि माम्।।4।।

सम्यग्ज्ञानमतीप्राप्त्यै, केवलं त्वत्पदद्वयम्।
आश्रयामि स्मरामि च, संततं भक्तिभावतः।।5।।

आचार्य श्री देशभूषण स्तुतिः

बसंततिलका छंद- कारुण्यपुण्यगुणरत्न - समुद्रसूरे!।
संसार वारिनिधिपोत! जगत्प्रपूज्य!।।
भव्याब्जभास्कर! ममाद्यगुरो! सुभक्त्या।
भो देशभूषणमुनीन्द्र! नमाम्यहं त्वां।।1।।

अनुष्टुप्- जन्ममृत्युभयाद् भीतां तितीर्षुं भववारिधेः।
हस्तावलंबनं दत्वा गृहकूपात् समुद्धृतः।।2।।

आगमज्ञो गभीरःसन् उपसर्ग परीषहान्।
सहिष्णुः शान्तिमूर्तिस्त्वं सुजनप्रीणनक्षमः।।3।।

स्मितास्यः क्रोधजिन्मोह मायामत्सरदूरगः।
ध्यानाध्ययनयोः सक्तो विकथाशून्यमानसः।।4।।

अनाद्यनिधनायोध्यापुर्या उद्धारको भवान्।
विंशहस्तप्रभामूर्तेः पुरुदेवस्य कारकः।।5।।

भाषाष्टादशविज्ञानी विद्वान् सार्वोपदेशकः।
मनोज्ञो लोकविल्लोकप्रियः सन्मार्गलोचनः।।6।।

सर्वत्रभारते पद्भ्यां विहरन्ननुकंपया।
सर्वेषां हितसंशास्ता त्वं निष्कारण बांधवः।।7।।

भगवंस्त्वत्प्रसादेन लब्धाबोधिः सुदुर्लभा।
प्रतिपित्साम्यहं तूर्णं ज्ञानं सौख्यमनश्वरं।।8।।

देशस्य भूषणः श्रीमान् देशभूषणयोगिराट्।
विश्वशांति प्रकुर्वाणो भवान् विजयतां चिरं।।9।।

पृथ्वी छंद- अनेक भवदुःखदं विषयसौख्यविषसन्निभं।
विवेच्य पुनरत्यजश्च जिनरूपरूपोऽभवः।।
सुमुक्तिललनेच्छया सततमात्मानं ध्यायसि।
नमोऽस्तु गुरुवर्य! ते परमसौख्यसंसिद्धये।।10।।

भगवान चन्द्रप्रभ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि–**चन्द्रपुरी (जिला-बनारस) उत्तर प्रदेश**

पिता–महाराजा महासेन **माता**–महारानी लक्ष्मणा

वर्ण–क्षत्रिय **वंश**–इक्ष्वाकु

देहवर्ण–कुंदपुष्प सम श्वेत **चिन्ह**–चन्द्रमा

आयु–दस लाख पूर्व वर्ष **अवगाहना**–छह सौ हाथ

गर्भ–चैत्र कृ. 5 **जन्म**–पौष कृ. 11

तप–पौष कृ. 11

दीक्षा-केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सर्वर्तुकवन एवं नागवृक्ष

प्रथम आहार–नलिन नगर के राजा सोमदत्त द्वारा (खीर)

केवलज्ञान–फाल्गुन कृ.7 **मोक्ष**–फाल्गुन कृ.7

मोक्षस्थल–सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में गणधर–श्री श्रीदत्त आदि 93

मुनि–ढाई लाख **गणिनी**–आर्यिका वरुणा

आर्यिका–तीन लाख अस्सी हजार

श्रावक–तीन लाख **श्राविका**–पांच लाख

जिनशासन यक्ष–विजयदेव **यक्षी**–ज्वालामालिनी देवी

भगवान चन्द्रप्रभु वर्तमान वीर नि.सं. 2546 से 39545 वर्ष कम सौ करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

तीर्थंकर चन्द्रप्रभदेव का जीवन परिचय

इस मध्यलोक के पुष्कर द्वीप में पूर्व मेरू के पश्चिम की ओर विदेह क्षेत्र में सीतोदा नदी के उत्तर तट पर एक 'सुगन्धि' नाम का देश है। उस देश के मध्य में श्रीपुर नाम का नगर है। उसमें इन्द्र के समान कांति का धारक श्रीषेण राजा राज्य करते थे। उनकी पत्नी धर्मपरायणा श्रीकांता नाम की रानी थी। वे दम्पत्ति पुत्र रहित थे अतः पुरोहित के उपदेश से पंच वर्ण के अमूल्य रत्नों से जिन प्रतिमाएँ बनवाई, आठ प्रातिहार्य आदि से विभूषित इन प्रतिमाओं की विधिवत् प्रतिष्ठा करवाई, पुनः उनके गंधोदक से अपने आपको और रानी को पवित्र किया और आष्टान्हिकी महापूजा विधि की। कुछ दिन पश्चात् रानी ने उत्तम स्वप्नपूर्वक गर्भधारण किया पुनः नवमास के बाद पुत्र को जन्म दिया। बहुत विशेष उत्सव के साथ उसका नाम 'श्रीवर्मा' रखा गया।

किसी समय 'श्रीपद्म' जिनराज से धर्मोपदेश को ग्रहण कर राजा श्रीषेण पुत्र को राज्य देकर दीक्षित हो गये। एक समय राजा श्रीवर्मा भी आषाढ़ मास की पूर्णिमा के दिन जिनपूजा महोत्सव करके अपने परिवारजनों के साथ महल की छत पर बैठे थे कि आकस्मिक उल्कापात देखकर विरक्त होकर श्रीप्रभ जिनेन्द्र के समीप दीक्षा लेकर श्रीप्रभ पर्वत पर संन्यास मरण करके प्रथम स्वर्ग में श्रीप्रभ विमान में श्रीधर नाम के देव हो गये।

धातकीखंड द्वीप की पूर्व दिशा में जो इष्वाकार पर्वत है उसके दक्षिण की ओर भरतक्षेत्र में एक 'अलका' देश है। उसमें अयोध्या नगर है उस नगर के अजितंजय राजा की अजितसेना रानी ने किसी समय उत्तम स्वप्न देखे और नवमास बाद श्रीधर देव को जन्म दिया। उसका नाम 'अजितसेन' रखा गया। पुण्य के उदय से अजितसेन ने चक्रवर्ती के चक्ररत्न और वैभव को प्राप्त कर लिया। श्रद्धा आदि गुणों से सम्पन्न राजा ने किसी समय एक मास का उपवास करने वाले अरिन्दम साधु को आहारदान देकर महान पुण्य बन्ध कर लिया था। दूसरे दिन वह राजा गुप्तप्रभ जिनेन्द्र की वन्दना के लिए मनोहर नामक उद्यान में गये। भगवान के मुख से अपने पूर्व भव सुनकर विरक्त होकर जैनेश्वरी दीक्षा ले ली। आयु के अन्त में नभस्तिलक पर्वत के अग्रभाग पर शरीर छोड़कर सोलहवें स्वर्ग में इन्द्र हो गये।

पूर्व धातकीखंड द्वीप में सीता नदी के दाहिने तट पर एक मंगलावती नाम का देश है। इसके रत्नसंचय नगर में कनकप्रभ राजा राज्य करते थे, उनकी कनकमाला रानी थी। वह अच्युतेन्द्र वहाँ से आकर इन दोनों के पद्मनाभ नाम का पुण्यशाली पुत्र हुआ। किसी समय पद्मनाभ राजा श्रीधर मुनि के समीप धर्मोपदेश श्रवण कर दीक्षित हो गये, सोलहकारण भावनाओं का चिन्तवन कर ग्यारह अंग में पारंगत होकर सिंहनिष्क्रीडित आदि कठिन-कठिन तप करने लगे। तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध करके आयु के अन्त में विधिवत् मरण करके वैजयन्त विमान में अहमिन्द्र हो गये। इनके श्रीवर्मा, श्रीधरदेव, अजितसेन चक्रवर्ती, अच्युतेन्द्र, पद्मनाभ, अहमिन्द्र, चन्द्रप्रभ भगवान ये सात भव प्रसिद्ध हैं।

पंचकल्याणक वैभव—अनन्तर जब इनकी छह माह की आयु बाकी रह गई, तब जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में चन्द्रपुर नगर के महासेन राजा की लक्ष्मणा महादेवी के यहाँ रत्नों की वर्षा होने लगी। चैत्र कृष्ण पंचमी के दिन गर्भकल्याणक महोत्सव हुआ एवं पौष कृष्ण एकादशी के दिन भगवान चन्द्रप्रभ का जन्म हुआ। इंद्रों ने सुमेरु पर्वत पर ले जाकर 1008 कलशों से तीर्थंकर शिशु का जन्माभिषेक करके महामहोत्सव मनाया। किसी समय दर्पण में अपना मुख देख रहे थे कि भोगों से विरक्त होकर देवों द्वारा लाई गई 'विमला' नाम की पालकी पर बैठकर सर्वर्तुक वन में गये। वहाँ पौष कृष्ण एकादशी के दिन हजार राजाओं के साथ दीक्षा ले ली। पारणा के दिन नलिन नामक नगर में सोमदत्त के यहाँ आहार हुआ था। तीन माह का छद्मस्थ काल व्यतीत कर भगवान दीक्षावन में नागवृक्ष के नीचे फाल्गुन कृष्ण सप्तमी के दिन केवलज्ञान को प्राप्त हो गये। तभी आकाश में अधर समवसरण की रचना हो गई। इंद्र की आज्ञा से कुबेर द्वारा निर्मित समवसरण का वैभव अचिन्त्य है।

ये चन्द्रप्रभ भगवान समस्त आर्य देशों में विहार कर धर्म की प्रवृत्ति करते हुए सम्मेदशिखर पर पहुँचे। एक माह तक प्रतिमायोग से स्थित होकर फाल्गुन शुक्ला सप्तमी के दिन ज्येष्ठा नक्षत्र में सायंकाल के समय शुक्लध्यान के द्वारा सर्वकर्म को नष्ट कर सिद्धपद को प्राप्त हो गये। भगवान के पाँचों कल्याणक महोत्सव इंद्रों द्वारा मनाये जाते हैं।

चतुर्विंशतिजिनस्तोत्रम्

-उपजाति छंद-

श्री नाभिसूनुर्भूवनैकसूर्यः, श्रीधर्मतीर्थस्य प्रवर्तको यः।
भव्यैकबंधुर्जगदेकनाथः, तमादिदेवं प्रणमामि नित्यं।।1।।

विजित्य सर्वं किल कर्मशत्रून्, अजेयशक्ति-र्ह्यजितो जिनेशः।
सौख्याकरोऽनंतगुणाकरो यः, द्वितीयतीर्थेशमहं स्तुवे तं।।2।।

पुनातु मे संभवनाथ! चित्तं, पुनः पुनः संसृतिदुःखतप्तं।
संस्तौमि नित्यं शरणं प्रपद्ये, भवाम्बुधेः पारगतं महेशम्।।3।।

गुणैरनन्तैरभिनंदनोऽसा-वगात् समृद्धिं सहसा त्रिलोक्यां।
ददाति सौख्यं किल भाक्तिकानां, तं देवदेवं प्रणमामि भक्त्या।।4।।

नयप्रमाणैः सकलं सुतत्त्वं, प्रकाशयन् यो जगतामुदेति।
सः सर्वलोकैकविभास्वराख्यम्, वंदे सुमत्यै सुमतिं जिनं तं।।5।।

नक्षत्रवृंदैः समुपास्यमानः, विभ्राजते पूर्णकलः शशीव।
धर्मामृतैः सिंचति भव्यजीवान्, पद्मालयं पद्मजिनं स्तुवे तं।।6।।

गणाधिपैः साधुनरामराद्यैः, रराज यो दिव्यसभासु मध्ये।
भव्याब्जसूर्यो गतरागमोहः, वंदे सुपार्श्वं तं देवदेवम्।।7।।

चंद्रप्रभो वागमृतांशुभिर्यो, जनान् प्रपुष्यन्नकलंकयुक्तः।
न चापि दोषाकरतां प्रयाति, सदा स्तुवे तं भवतापशून्यं।।8।।

पुष्यंति भव्यास्तव नाममंत्रैः, तुष्यंति नित्यं गुणकीर्तनेन।
पुष्यान्मनो मे जिनपुष्पदंतः, त्वां भक्तिपुष्पांजलिनार्चयामि।।9।।

संसारदावाग्निषु दग्धजीवाः, शीतीभवन्त्याश्रयतस्तवैव।
श्रीशीतलेशो भुवनत्रयेशः, शीतं मनो मे कुरु वाक्सुधाभिः।।10।।

श्रेयान् जिनः श्रेयसि मार्गलग्नान्, शरीरिणो रक्षतु विघ्नवृंदात्।
श्रेयस्करो मे भवतात् समंतात्, श्रियं विदध्यात् शिवसौख्यकर्त्रीं।।11।।

देवेंद्रवृंदैर्नरनाथमुख्यैः, मुनीश्वरैः सर्वगणाधिपैश्च।
सदा प्रपूज्यो भुवनेषु पूज्यः, त्वां वासुपूज्यं प्रणमामि भक्त्या।।12।।

मलैर्विमुक्तो विमलो जिनस्त्वं, त्वदंघ्रिसेवा विमलीकरोति।
मनःपुनीते किल भाक्तिकानाम्, नमामि नित्यं विमलं विशुद्धयै।।13।।

अनंत! दृग्ज्ञानसुवीर्यसौख्यं, अनंततां याति तव प्रसादात्।
अनंतदोषान् जिन्! मे लुनीहि, नमाम्यनंतं हृदि धारये त्वां।।14।।

श्रीधर्मचक्रं भुवि चालयन् त्वम्, श्रीधर्मतीर्थंकरतां गतस्त्वम्।
क्षमादिधर्मान् किल लब्धयेऽहं, श्रीधर्मनाथं शिरसा नमामि।।15।।

शांतिं भवेत्सर्वजगज्जनानां, शांतिं भवेत्सर्वगणाय नित्यं।
शांतं मनो मे भव सर्वतापात्, श्रीशांतिनाथं प्रणमामि नित्यं।।16।।

संसारवार्धौ विनिमग्नजंतून्, उद्धृत्य यो मोक्षपदे धरन् हि।
कृपापरस्तं प्रभुकुंथुनाथं, नमामि भक्त्या परया मुदा च।।17।।

स्तुत्या न तुष्यन् प्रददाति सौख्यं, प्रद्वेषतो दुःखमपि प्रदत्ते।
तथाप्यरस्त्वं किल वीतरागः, ह्यचिंत्यमाहात्म्यमतःस्तुवे त्वां।।18।।

यः कर्ममल्लं प्रतिमल्ल एव, श्रीमल्लिनाथो भुवनैकनाथः।
संसारवल्लिं च लुनीहि मे त्वं, मनः प्रसत्तिं कुरु मे समंतात्।।19।।

महाव्रतं मुक्तिपथं दधानः, प्राप्तः प्रमुक्तिं मुनिसुव्रतस्त्वं।
बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः, भूयात् सदा मे हि नमोऽस्तु तुभ्यं।।20।।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवंद्यं, श्रीदेवेदवं नमिनामधेयं।
भक्त्या प्रवंदे त्रयशुद्धितस्त्वां, मनःसमाधिं, विदधातु देव!।।21।।

जंतून् विलोक्याशु दयां चकार, राजीमतीं, सर्वपरिग्रहं च।
त्यक्त्वागृहीत् धर्मधुरं सुदीक्षां, तं नेमिनाथं शिरसा नमामि।।22।।

भवे भवे दैत्यकृतोपसर्गं, सोढ्वा क्षमावान् जिनराजराजः।
महामनाः पार्श्वजिनः स्तुवे त्वां, सर्वंसहां मे कुरु नाथ! शक्तिं।।23।।

श्रियाभिवृद्धः खलु वर्धमानः, श्रीमुक्तिलक्ष्म्या भुवनाधिनाथः।
सर्वार्थसिद्धया कृतकृत्यसिद्धः, त्वां नौमि भो वीर! निजात्मसिद्धयै।।24।।

अनुष्टुप् छंद - चतुर्विंशतितीर्थेशां, स्तुतिं कृत्वा सुभक्तितः।
याचे स्वात्मश्रियं नित्या-मर्हज्ज्ञानमतिं त्वरं।।25।।

श्री चौबीस जिनस्तुति

श्री चौबीसों तीर्थंकर ही, भव्यों के शिव पथ नेता हैं।
वे कर्म अचल के भेत्ता हैं, त्रिभुवन के ज्ञाता दृष्टा हैं।।
मैं उनको पुनः पुनः प्रणमूँ, नितप्रति ध्याऊँ औ गुण गाऊँ।
यावत् नहिं सिद्धि मिले तावत्, जिन चरणों में ही रम जाऊँ।।1।।

चन्द्रप्रभु पुष्पदंत शशि सम, छवि पार्श्व सुपार्श्व हरित तनु हैं।
श्री वासुपूज्य औ पद्मप्रभू, तनु लाल कमल सम सुन्दर हैं।।
नेमी मुनिसुव्रत नीलमणी, जिन सोलह काँचन तनु सुन्दर।
ये वर्ण सहित भी वर्ण सहित, चिन्मूर्ति अमूर्तिक परमेश्वर।।2।।

श्री वासुपूज्य मल्ली नेमी, श्री पार्श्वनाथ महावीर कहे।
ये पाँचों बाल ब्रह्मचारी, मेरे मन में नित वास करें।।
श्री वृषभदेव, जिन वासुपूज्य, नेमी प्रभु पर्यंकासन से।
बाकी सब जिनवर कायोत्सर्ग, आसन से छूटे कर्मों से।।3।।

श्री वृषभदेव अष्टापद से, श्री वासुपूज्य चंपापुरि से।
श्री नेमि ऊर्जयंत गिरि से, महावीर प्रभू पावापुरि से।।
सम्मेदशिखर से बीस प्रभू, तीर्थंकर मुक्ति पधारे हैं।
इन धाम को नित प्रति वंदूँ मैं, ये पावन करने वाले हैं।।4।।

श्री शांति-कुंथु-अर तीर्थंकर, कुरुवंश तिलक त्रिभुवन मणि हैं।
मुनिसुव्रत नेमी यदुवंशी, श्री पार्श्व उग्रकुल के मणि हैं।।
श्री वीरप्रभू नाथवंशी, औ शेष जिनेश्वर भुवि भास्कर।
इक्ष्वाकुवंश चूड़ामणि हैं, हमको होवें अविचल सुखकर।।5।।

जिनवर के पंचकल्याणक से, जन्म स्थल औ मुक्ति स्थल से।
औ मात पिता के नाम सुकीर्तन, से वंशों से चिन्हों से।।
जिन आयु वर्ण तनु ऊँचाई, के वर्णन से चौबिस जिन के।
अगणित गुणगण के कीर्तन से, मैंने स्तुति की बहु रुचि से।।6।।

चौथे युग में जब तीन वर्ष, पन्द्रह दिन औ अठमास बचे।
तब वीर प्रभू कार्तिक मावस, को कर्मनाश शिवधाम बसे।।

अब तक पच्चीस शतक वर्षों, तक शासन चलता आया है।
पच्चीस शतक का उत्सव यह, जन जन ने खूब मनाया है।।7।।

यह उत्सव एक वर्ष तक का, युग युग तक याद दिलाएगा।
श्री वीर प्रभू की वाणी को, सब जन जन में पहुँचाएगा।।
श्री वीर प्रभू का धर्मचक्र, सर्वत्र धर्म की जय करता।
सर्वत्र भ्रमण करके जग में, हर जन जन के सब अघ हरता।।8।।

श्री वीर प्रभू का यह शासन, सब जग में मंगलकारी है।
सब जग में उत्तम मान्य हुआ, सब ही जन को सुखकारी है।।
ये ही शरणं शरणागत को, अतएव सदा जयशाली है।
इच्छित से अधिक भी फलदायी, यह अद्भुत महिमाशाली है।।9।।

इस विधि चौबीसों जिनवर को, मैंने एकाग्रमना होके।
अति भक्ती से स्तुति की है, यह फले अनंतगुणा होके।।
जो भी कल्याण कल्पतरु इस, स्तव को नित प्रति पढ़ते हैं।
वे निश्चित ही ''सज्ज्ञानमती'' ईप्सित लक्ष्मी को वरते हैं।।10।।

-दोहा-

वीर अब्द पच्चीस सौ, एक[1] महागुण खान।
श्रावण शुक्ला पूर्णिमा, गुरूवार दिन जान।।11।।

शांतिनाथ के जन्म से, पावन शुभ स्थान।
गणिनी ज्ञानमती रचा, यह स्तवन महान।।12।।

पढ़े सुने जो भाव से, नाशे क्लेश अशेष।
चौबीसों जिनराजवर, मंगल करें हमेश।।13।।

यावत् जिनशासन रवी, करे जगत उद्योत।
तावत् यह जिनसंस्तवन, करे भविक मन मोद।।14।।

1. वीर सं. 2501, ईसवी सन् 1975 में लिखा है।

श्री महावीर जिनस्तुतिः

त्रैलोक्याधिपतिर्वीरः, महावीरोंऽतिमो जिनः।
महावीरमहं भक्त्या, श्रयामि भवभीरुतः।।1।।

महावीरेण सद्दृष्टिः, बभूव गौतमो गणी।
महावीराय सत्प्रीत्या, नमो नमोऽस्तु संततम्।।2।।

महावीरान्महान् धर्मः, अहिंसा परमो भुवि।
महावीरस्य सत्कीर्तिः, विश्वऽस्मिन् वर्ततेऽधुना।।3।।

महावीरे गुणाः सर्वे-ऽनन्तानंताः स्वयं स्थिताः।
महावीर! कृपां कृत्वा, पूर्णां ज्ञानमतीं कुरू।।4।।

मृत्युंजयिपदप्राप्त्यै, केवलं त्वद्पदद्वयं।
आश्रयामि स्मरामि च, संततं भक्तिभावतः।।5।।

श्री वीरजिन स्तोत्र

महावीर वीर सन्मति भगवन् ! अतिवीर सदा मंगल करिये।
हे वर्धमान! भव वारिधि से, अब मुझको पार तुरत करिये।।
वह कुंडलपुरि जग पूज्य हुई, सिद्धार्थ दुलारे जन्मे थे।
प्रियकारिणि माँ की गोदी में, त्रिभुवन के गुरुवर खेले थे।।1।।

आषाढ़ सुदी छठ पूज्य हुई, जब गर्भ में प्रभु अवतार लिया।
माता त्रिशला की सेवा का, सुर ललनाओं ने भार लिया।।
शुभ चैत्र सुदी तेरस का दिन, है धन्य धन्य वह सुखद घड़ी।
जब वर्द्धमान ने जन्म लिया, नभ से सुर पंक्ति उमड़ पड़ी।।2।।

प्रभु शैशव में अहिपति फण पर, चढ़कर संगम सुर जीता था।
नहिं ब्याह किया नहिं राज्य किया, जनता का मन भी फीका था।।

मगसिर वदि दशमी धन्य हुई, जब केशलोंच कीना तुमने।
नृप कूल ने प्रथम आहार दिया, पंचाश्चर्य किया देवों ने।।3।।

कौशाम्बी में चन्दना सती, सिर मुंडित जकड़ी बेड़ी में।
प्रभु दर्शन से बेड़ियाँ झड़ीं, सुन्दर तनु हुआ एक क्षण में।।
कोदों भोजन हो गया खीर, प्रभु को आहार दे धन्य हुईं।
यह महिमा तीर्थंकर प्रभु की, पंचाश्चर्यों की वृष्टि हुई।।4।।

अतिमुक्तक वन में ध्यान लीन थे, भव ने आ उपसर्ग किया।
तब अचलित प्रभु को देख स्वयं, भार्या सह पूजा भक्ति किया।।
बैशाख सुदी दशमी तिथि में, केवल रवि किरणें प्रकट हुईं।।
शुभ समवसरण था रचा हुआ, दिव्यध्वनि फिर भी खिरी नहीं।।5।।

श्रावण श्यामा एकम उत्तम, गौतम गणधर जब आए हैं।
विपुलाचल पर ध्वनि प्रगट हुई, मुनिगण सुर नर हर्षाए हैं।।
हे वीर प्रभो! तव शासन में, मुझको रत्नत्रय निधी मिली।
मैं भक्ति सहित प्रणमूँ तुमको, मेरी मन कलियाँ आज खिलीं।।6।।

तनु सात हाथ कांचन कांति, आयू बाहत्तर वर्ष कही।
है चिन्ह मृगेन्द्र प्रभो! तेरा, जो ध्यावे पावे मोक्ष मही।।
कार्तिक वदि चौदस रात्रि अंत, आमावस का प्रत्यूष कहा।
सब कर्म नाश प्रभु मोक्ष गए, स्वात्मोत्थ सहज आनंद लहा।।7।।

पावापुरि के उपवन में जो, सरवर है कमल खिले उसमें।
प्रभु के निर्वाण कल्याणक से, अब तक भी कमल खिले सच में।।
देवों ने आकर पूजा की, महावीर प्रभू त्रिभुवन पति की।
अंधियारी में दीपक ज्वाले, तब से ही दीपावली हुई।।8।।

हे वीर प्रभो! मंगलमय तुम, लोकोत्तम शरणभूत तुम ही।
भव भव के संचित पाप पुँज, इक क्षण में नष्ट करो सब ही।।
मैं बारम्बार नमूँ तुमको, भगवन्। मेरे भव त्रास हरो।
"सज्ज्ञानमती" सिद्धी देकर, स्वामिन् ! अब मुझे कृतार्थ करो।।9।।

श्री पार्श्वनाथ मंदिर वंदना (द्वितीय मंदिर)

श्री पार्श्वनाथ स्तुतिः *(सप्तविभक्ति समन्वित)*

श्री पार्श्वनाथतीर्थेश, उपसर्गजयी महान्।
पार्श्वनाथं नमन्तीह, भक्ताः कष्टप्रहाणये।।1।।

पार्श्वनाथेन सद्भक्ताः, भवन्तीह सहिष्णवः।
पार्श्वनाथाय सद्भक्त्या-ऽनन्तानंता नमोऽस्तु मे।।2।।

पार्श्वनाथाद् क्षमाभावैः, भक्तोऽभूत् कमठो रिपुः।
पार्श्वनाथस्य भक्त्या मे, शक्तिः सर्वंसहा भवेत्।।3।।

पार्श्वनाथे मतिर्मे स्यात्, यावत् सिद्धिर्न मे भवेत्।
भोः पार्श्वनाथ! मां रक्ष, शरण्य एक एव त्वं।।4।।

भगवान पार्श्वनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि–वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

पिता–महाराजा अश्वसेन
माता–महारानी वामादेवी (ब्राह्मी)
वर्ण–क्षत्रिय
वंश–उग्रवंश
देहवर्ण–मरकतमणि सदृश (हरा)
चिन्ह–सर्प
आयु–सौ वर्ष
अवगाहना–नौ हाथ
गर्भ–वैशाख कृ. 2
जन्म–पौष कृ. 11
तप–पौष कृ. 11
दीक्षा वन एवं वृक्ष–अश्ववन एवं देवदारूवृक्ष
प्रथम आहार– गुल्मखेट नगर के राजा धन्य द्वारा (खीर)
केवलज्ञान स्थल–अहिच्छत्र
केवलज्ञान–चैत्र कृ. 4 (14)
मोक्ष–श्रावण शु. 7
मोक्षस्थल–सम्मेद शिखर पर्वत
समवसरण में गणधर–श्री स्वयंभू आदि 10
मुनि–सोलह हजार
गणिनी–आर्यिका सुलोचना
आर्यिका–छत्तीस हजार
श्रावक–एक लाख
श्राविका–तीन लाख
जिनशासन यक्ष–धरणेन्द्र देव
यक्षी–पद्मावती देवी

भगवान पार्श्वनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2546 से 2795 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

उपसर्गविजयि श्रीपार्श्वनाथ जिनस्तुतिः

-उपजातिछंदः-

कल्याणकल्पद्रुमसारभूतं, चिंतामणिं चिंतितदानदक्षम्।
श्रीपार्श्वनाथस्य सुपादपद्मं, नमामि भक्त्या परया मुदा च।।1।।
जो कल्याण कल्पतरु सार-भूत चिंतामणि चिंतितदा।
श्रीपारस प्रभु पादकमल को, भक्तिभाव से नमूँ मुदा।।

ध्याने स्थितो यो बहिरंतरंगं, त्यक्त्वोपधिं तत्र तदा जिनस्य।
मातामहः स्यात् कमठासुरोऽसौ, अभूत् कुदेवः कुतपोऽभिरेव।।2।।
अंतर्बहिः परिग्रह तजकर, ध्यान लीन जब खड़े प्रभो!।
कमठासुर कूतप से मरकर, तब मातामह हुआ प्रभो!।।

रुद्धं विमानं पथि गच्छतोहा! ध्यानस्थपार्श्वं प्रविलोक्यरुष्ट्वा।
शत्रुं च मत्वा कृतभीमरूपो, धाराप्रपातैः स चकार वृष्टिं।।3।।
पथ में जाता रुका विमान, हा! ध्यानस्थ पार्श्व को लख।
क्रुधित शत्रु गिन भीमरूप धर, मूसलधार वृष्टि को कर।।

चकास्ति विद्युत् दशदिक्षु पिंगा, वात्या महद्ध्वांतमयं च कालं।
घनाघनोगर्जति घोररावैः, प्रचंडवातैः परिमूलयन् द्रून्।।4।।
विद्युत चमके दश दिश में, आंधी अँधियारी काल समान।
गरजे मेघ भयंकर वायू, वृक्ष उखाड़े शैल समान।।

परीषहैर्वातकृतैस्तदासौ, महामना धीरगभीरपार्श्वः।
अकम्पचित्तः कनकाचलो वै, तं पार्श्वनाथं त्रिविधं प्रवंदे।।5।।
वायु भयंकर उपसर्गों से, महामना पारस प्रभु धीर।
अचलितमना मेरु सम पारस, त्रयविधि वंदूं महागभीर।।

पुण्यप्रभावाद् विचलासनाच्च, यातः फणीन्द्रश्चकितः सभार्यः।
फणातपत्रैरुपसर्गकाले, भक्तिं व्यधात् यस्य नमोऽस्तु तस्मै।।6।।
पुण्योदय से फणपति आसन, कंपा पद्मावति के साथ।
आकर फण का छत्र किया प्रभु, शिर पर वंदूं पारसनाथ।।

श्री पार्श्वनाथः स्वपरात्मविज्ञः, श्रेणीं श्रितः स्वात्मजशुक्लयोगैः।
घातीनिहत्वा जगदेकसूर्यः, कैवल्यमाप्नोत् तमहं स्तवीमि।।7।।
स्वपरभेदवित् पारस स्वात्मज, ध्यानशुक्ल श्रेणी पर चढ़।
घात घातिया केवल पायो, त्रिभुवनसूर्य नमूँ शुचि कर।।

माणिक्यगारुत्मणिरत्नगर्भैः, वैडूर्यमुक्तामणिहीरकाद्यैः।
शक्राज्ञया वृत्तसभां जिनस्य, आकाशमध्ये व्यतनोद् धनेशः।।8।।
माणिकरत्न गरुत्मणि मुक्ता, हीरकमणि वैडूर्यों से।
इन्द्राज्ञा से धनपति रचियो, समवशरण गगनांगण में।।

स्तंभांतमानादिविशालकायाः, सरांसि पुष्पस्य सुवाटिका स्युः।
प्राकारतुंगास्त्रयसालशोभाः, वाप्यादयः स्वच्छजलाः सुरम्याः।।9।।
अतिऊँचे मानस्तंभों से, पुष्पवाटिका सरवर से।
परकोटे सालत्रय शोभें, वापी रम्य स्वच्छ जल से।।

क्षिपंति धूपस्य घटेषु देवाः, सौगंध्यधूपं सुरभिः समंतात्।
सुतोरणाद्या ध्वजपंक्तयश्च, मयूरहंसादिकचिन्हयुक्ताः।।10।।
धूपघटों में सुरगण खेते, धूप सुगंधित चउदिश में।
तोरण ध्वजपंक्ती बहु शोभें, हंस मयूर चिन्ह युत हैं।।

भामंडले सप्तभवान् सुभव्याः, वापीजलेऽपि प्रविलोकयंति।
सर्वाः सुसंपत्निधियोऽपि विश्वे, रत्नानि सर्वाणि बभुश्च तत्र।।11।।
देखें सप्तभवों को भविजन, भामंडल वापी जल में।
नवनिधि चौदहरत्न सभी, संपत्ति वहाँ बहुविध शोभें।।

द्वारेषु देवाः किलरक्षकाः स्युः, सद्दृष्टिमद्भिः सह रज्यमानाः।
मध्ये त्रिसालस्य हि गंधकुट्यां, सिंहासनस्योपरि देवदेवः।।12।।
रक्षकदेव खड़े द्वारों पर, सम्यग्दृष्टी के प्रिय हैं।
तीनसाल के मध्य गंधकुटि, सिंहासन पर प्रभु शोभें।।

विराजते रत्नमणिप्ररोचिः, कंजासने या चतुरंगुलास्पृक्।
छत्रत्रयं चंद्रनिभं प्रवक्ति, "त्रैलोक्यनाथोऽय" मिति स्तुवे तं।।13।।

रत्नमणीमय कमलासन पर, चतुरंगुल ऊपर राजें।
तीनछत्र "त्रिभुवनपति" सूचक, उन प्रभु को हम नित वंदे।।

देवा व्यधुर्दुंदुभिनादमुच्चैः, त्रैलोक्यजंतुं प्रति सूचयंतं।
जयारवं कल्पतरोश्च वृष्टिं, गंधोदकैश्च प्रणमाम्यहं तं।।14।।
दुंदुभि बजती त्रिभुवन जन को, सूचित करती तव जयकार।
कल्पतरू से पुष्पवृष्टि, गंधोदक वर्षा हो सुखकार।।

अशोकवृक्षो जनशोकहारी, वियोगरोगार्तिविनाशकारी।
सुवीज्यमानाश्चमरीरुहाश्च, भांतीव ते निर्झरवारिधाराः।।15।।
तरुअशोक जन शोकहरे, रोगार्ति वियोग विनाश करें।
चौंसठ चमर ढुरे निर्झरजल-सम प्रभु पर हम उन्हें नमें।।

भाश्चक्रकांतिः प्रभुदेहदीप्त्या, विडंबयत्कोटिरविप्रभासौ।
सर्वार्थभाषामयदिव्यवाक् ते, त्रिकालमाविर्भवति स्तुवे त्वां।।16।।
प्रभुतनु कांति से भामंडल, दिपे कोटि रवि शशि लज्जें।
सब भाषामय दिव्यध्वनि तव, त्रिसमय प्रगटे नमूँ तुम्हें।।

देवा मनुष्याः पशु-पक्षिवृंदं, श्रीपार्श्वमानम्य मिथश्च सर्वे।
विरोधभावं परिहृत्य नित्यं, तिष्ठंति प्रीत्या शुभभावनातः।।17।।
देव असुर नर पशु पक्षीगण, मिल पारस का कर वंदन।
वैरभाव को छोड़ परस्पर, परमप्रीति धारें सब जन।।

दिशोऽमलाः स्वच्छसरांसि भांति, षडर्तुजातास्तरवो लताद्याः।
शाल्यादिसस्यान्यभवन् स्वतश्च, जीवस्य हिंसा न तदा कदाचित्।।18।।
निर्मल दिश सब स्वच्छ सरोवर, शाली आदिक खेत फलें।
प्राणी हिंसा कभी न होती, षट् ऋतु के फल फूल खिलें।।

केशाः नखाः वृद्धिमगुः प्रभोर्न, दृग्निर्निमेषे चतुरास्यता च।
तनुश्च ते दर्पणवत् चकास्ति, वंदे तमेतेऽतिशयाश्च यस्य।।19।।
नख अरु केश बढ़े नहिं प्रभु के, दृग टिमकार रहित शोभें।
दिखें चतुर्मुख तनु दर्पणवत्, इन अतिशय युत को वंदे।।

सेन्द्रा नरेन्द्राश्च तथा फणीन्द्राः, नत्वा जिनेन्द्रं गणिनं च भक्त्या।
तत्र स्थिता धर्मसुधां पिबंतः, संतर्पितास्तानुपदिश्य पार्श्वः।।20।।
इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्र नमनकर, प्रभु को गणधर को भजकर।
बैठे सभा में धर्मपिपासु, प्रभु उपदेश दिया सुखकर।।

विहारकाले शुभमग्रगामी, श्रीधर्मचक्रं विबभौ विभोस्ते।
सुहेमपद्मेषु विभुश्च पादौ, धृत्वांतरिक्षे व्यहरत् स्तुवे तं।।21।।
प्रभु बिहार में आगे चलता, धर्मचक्र राजे सुखकर।
कनक कमल पर प्रभु पग धरते, गगन गमन करते मनहर।।

नष्टोपसर्गे रविकेवलोत्थे, जातं त्वहिक्षेत्रमिदं सुतीर्थं।
क्षेत्रं पवित्रं जगति प्रसिद्धं, भक्त्या सदा भव्यजनाः स्तुवंति।।22।।
दूर हुआ उपसर्ग तुरत, कैवल्यज्ञान रवि उदित हुआ।
तीर्थ पवित्र "अहिच्छत्रं" भविजन, संस्तुत जग सिद्ध हुआ।।

श्रीपार्श्वनाथाय नमोऽस्तु तुभ्यं।
दुःखार्तिनाशाय नमोऽस्तु तुभ्यं।।
अभीप्सितार्थाय नमोऽस्तु तुभ्यं।
त्रैलोक्यनाथाय नमोऽस्तु तुभ्यं।।23।।
नमोऽस्तु पारसनाथ! तुम्हें, दुःखार्ति विनाशि नमोऽस्तु तुम्हें।
नमोऽस्तु ईप्सित हेतु तुम्हें, हे त्रिभुवननाथ! नमोऽस्तु तुम्हें।।

–शार्दूलविक्रीडित छन्द –

यो लोकांतर्भूतवस्तुसकलं नक्षत्रवत् लोकते।
यो जित्वा ह्युपसर्गकं "जिन" इति प्रख्यश्च कर्माण्यपि।।
वामानंदन एष एव भगवान् लोकैककल्पद्रुमः।
भूयात् मे त्वरमश्वसेननृपजः श्री "ज्ञानमत्यै" श्रियै।।24।।

जो सब त्रिभुवन की वस्तू को, इक नक्षत्र सदृश देखें।
जो उपसर्ग रु कर्मशत्रु को, जीता "जिन" इस विधि से हैं।।
अश्वसेन सुत वामानंदन, वे लोकैककल्पतरु हैं।
उन पारस प्रभु के प्रसाद से, "ज्ञानमती" श्री मम होवे।।

श्री चन्द्रप्रभ जिनप्रतिमा की महिमा

(ईसवी सन् 1952 का इतिहास)

श्री पार्श्वनाथ भगवान (टिकैतनगर के) को नमस्कार करके मैंने प्रार्थना की कि– हे भगवन्! आज मैं आपके दर्शन करके बाराबंकी आचार्यश्री देशभूषण जी महाराज के दर्शनार्थ जा रही हूँ। यद्यपि घर में यही कह दिया है कि सायंकाल में वापस आ जाऊँगी, फिर भी हे भगवन्! ''अब मैं पिच्छी लेकर ही आपके श्रीचरणों के दर्शन करने आऊँ'', यह मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिए और मेरी मनोकामना पूर्ण कीजिए। **''आप चिन्तामणि पार्श्वनाथ हैं। मुझे चिंतित फल प्रदान कीजिए।''** ये पवित्र तिथि थी भाद्रपद कृष्णा चतुर्थी की एवं ईसवी सन् 1952 दिन शनिवार था।

पुनश्च-घर आकर माँ को पुनः पुनः आश्वासन देकर कि-मैं सायंकाल तक वापस आ जाऊँगी, ऐसा कहकर छोटे भाई कैलाशचंद को साथ लेकर बाराबंकी की बस में बैठकर निकली, चूँकि पिताजी उस दिन कुछ कार्यवश त्रिलोकपुर गये हुए थे, अन्यथा वे किसी भी हालत में मुझे जाने नहीं देते अतः मौका देखकर ही मैंने माँ को समझा-बुझाकर चिंतामणि प्रभु पार्श्वनाथ के चरणों में प्रार्थना करके घर से प्रस्थान किया व प्रातः लगभग 9.30 बजे बाराबंकी पहुँच गई। पहले मंदिर में भगवान के दर्शन किए, पुनः आचार्यश्री देशभूषण जी महाराज के पास पहुँचकर दर्शन किए।

यहाँ पिता की बुआ के घर में कपूरचंद जी (बुआ के पोते) की पत्नी आईं और मैं उनके साथ चली गई। वहीं ठहरने की व्यवस्था हो गई थी। मैंने माँ को यही कहा था कि–

मैंने रत्नकरण्ड श्रावकाचार के सभी श्लोक कंठाग्र कर लिए हैं अतः आचार्यश्री के पास परीक्षा देने जा रही हूँ.....आदि।

पुनः सायंकाल में जैसे-तैसे समझाकर भाई कैलाशचंद को वापस भेज दिया और कह दिया कि दो-तीन दिन में आकर मुझे वापस ले जाना।

ये लोग प्रायः चार दिन, आठ दिन आदि में आते रहे, मैं दिन आगे बढ़ाती रही। यहाँ पर श्रावकों द्वारा ऋषिमण्डल विधान का आयोजन हुआ, उसमें मैंने

भी विधान किया पुनः दशलक्षण पर्व आ गया।

मैं दिन भर मंदिर के पास बगीचे के मंदिर में रहती थी और रात्रि में कपूरचंद जी के घर जाकर सोती थी, पुनः स्नानादि से निवृत्त हो मंदिर आ जाती थी। यहाँ बगीचे के मंदिर में गंधकुटी में चतुर्मुखी भगवान महावीर स्वामी विराजमान हैं।

मैं द्रव्यसंग्रह, धनंजयनाममाला, अमरकोश, दशभक्ति आदि स्वयं कंठाग्र-याद कर रही थी। आचार्य महाराज के पास प्रवचन आदि के समय ही जाती थी। इसी मध्य लखनऊ से एक महिला अपने युवा पुत्र की मृत्यु से दुःखीमना आकर मेरे पास रह रही थी अतः मैं अकेली नहीं थी।

यहाँ पर श्यामाबाई आदि चार महिलाएं व उनके पति पूर्णतया हमारे पक्ष में थे अतः आचार्यश्री इन महिलाओं को 'लौकांतिक देव' कहा करते थे।

आश्विन शुक्ला चतुर्दशी के दिन आचार्यश्री का केशलोंच था। लखनऊ, कानपुर, टिकैतनगर आदि के बहुत ही श्रावक-श्राविका व प्रतिष्ठित श्रेष्ठीगण उपस्थित थे। मेरे माता-पिता भी सपरिवार आये थे। महमूदाबाद से हमारे मामा भी आए हुए थे।

वैराग्य का दृश्य-

आचार्यश्री का केशलोंच हो रहा था, इसी मध्य सामने आगे की पंक्ति में बैठी हुई मैंने भी अपने हाथों से अपने बड़े-बड़े केश उखाड़ने शुरू कर दिए।

यह दृश्य देखते ही सभा में जोरों से हंगामा शुरू हो गया...। "रोको, रोको! यह बालिका अभी बहुत छोटी है, दीक्षा की उम्र नहीं है.....। आचार्यश्री का केशलोंच पूर्ण हो गया।

उस समय किसी का साहस नहीं था, जो मेरा हाथ पकड़कर रोकते। तभी कुछ श्रावकों ने कहा-पुलिस को बुलाओ.....। माँ उस समय मूर्च्छित होकर गिर गई थीं। कुछ महिलाओं ने उन्हें संभाला था। माँ की गोद में तीन माह की बेटी मालती थी, जो गिर गई, उसे भी महिलाओं ने संभाला था।

तभी आचार्यश्री ने एक श्रावक से कहा–आप इसकी माँ के 'मामा' है। आप हाथ पकड़ो इसे केशलोंच से रोको। माँ के 'मामा' बाबूराम जी ने आगे बढ़कर मेरा हाथ पकड़कर शक्तिपूर्वक मुझे केशलोंच से रोक दिया।

'हल्ला' शांत हो गया और मैं बड़े मंदिर में जाकर भगवान चंद्रप्रभ की प्रतिमा के निकट बैठ गई और नियम कर लिया कि–

''अब मैं व्रत ग्रहण कर व गृह त्याग कर ही भोजन ग्रहण करूँगी।''

रात्रि में लगभग 10 बजे के मध्य कुछ समाज के प्रतिष्ठित लोग आये और बोले-बेटी! अब मंदिर बंद होने का टाइम है। अतः तुम चलो, अभी घर चलो.....। तभी मेरी माँ आईं और साथ में कपूरचंद जी की धर्मपत्नी भी आईं, जिनके पास मैं दो महीने से रह रही थीं और वे मेरा हाथ पकड़कर बड़े प्रेम से अपने साथ ले गईं। मैं पहले जिस कमरे में सोती थी, वहीं माँ मेरे पास रुक गईं।

रात्रिभर मैं और माँ दोनों ही जागते रहे और संवाद चालू हुआ। माँ कहती थी-बेटी मैना! तुम्हारे ऊपर में तो मात्र आकाश है और नीचे धरती...। तुम्हारा इस छोटी सी उम्र में कौन संरक्षक है-कोई आर्यिका या ब्रह्मचारिणी भी नहीं है तुम अकेली कैसे रहोगी। महाराज जी अकेले हैं, उनके पास तुम्हारी रक्षा कैसे होगी ? सर्दी, गर्मी, आदि कैसे सहन करोगी ?.....

मैं कहती थी माँ! अनादि काल से संसार में यह जीव अकेला ही आया है, अकेला ही भ्रमण कर रहा है। धर्म ही मुझे शरण है, वही रक्षक है। वही मेरी रक्षा करेगा.....। ऐसे पूरी रात माँ-बेटी की चर्चा चलती रही।

चूँकि आचार्य महाराज ने कह दिया था कि जब तक माँ या पिता स्वीकृति नहीं देंगे, मैं कुछ भी व्रत नहीं दूँगा.....।

पिताजी तो मोह से विक्षिप्त होकर कहीं चले गये थे। ताऊजी व चाचाजी व और भी लोग उन्हें ढूंढने में लगे थे किन्तु उनका कोई कहीं पता नहीं चल रहा था। माँ परेशान थी.....। कहीं तुम्हारे पिता ने कुछ कर लिया, कहीं कुएं आदि में कूद गये, जान दे दी तो क्या होगा? तुम्हारा अहिंसा धर्म कहाँ रहेगा ?.... आदि।

मैंने रात्रि में लगभग 4 बजे माँ को समझाते हुए कहा कि-

यदि तुम मेरी सच्ची माता हो तो एक काम कर दो, दो लाइन लिखकर स्वीकृतिरूप में आचार्य महाराज को दे दो।

माँ तो बचपन से 13-14 वर्ष की उम्र से ही समझ चुकी थी कि ये गृहस्थी में न फंसकर आत्मकल्याण के मार्ग में ही लगेगी, दीक्षा लेगी ही। अतः उनके हाथ में मैंने एक कागज और पेंसिल दिया, वे आंसू पोछते हुए लिखने लगीं.....

महाराज जी! आप मेरी बेटी मैना को दीक्षा दे दीजिए, ये निभा लेगी, मुझे विश्वास है मेरी स्वीकृति है.....। **-माँ मोहिनी**

इस प्रकार अपनी सही करके बोलीं-देखो! मैंना! आज मैं तुम्हें मोक्षमार्ग में सहयोग दे रही हूँ, मुझे 'वचन दो' कि एक दिन तुम भी मुझे गृह कीचड़ से निकालकर अपने पास ले लेना....। और जोर-जोरे से रोने लगीं....। मैंने उनके चरण स्पर्श करके वचन दिया।

"माँ! आज तुम मुझे सहयोग दे रही हो, एक दिन मैं भी तुम्हें अवश्य ही दीक्षा दिलाऊँगी।"

प्रातः स्नानादि आदि से निवृत्त होकर हम– माँ और बेटी आचार्यश्री के समक्ष पहुँचे। उसी समय छोटे मामा भगवानदास जी, जो वहीं ठहरे हुए थे, वे भी साथ ही पहुँच गये।

आचार्य महाराज को नमोऽस्तु करके माँ ने महाराज जी के हाथ में कागज-पत्र दिया। महाराज ने पढ़ा और प्रसन्नमना बोले-जाओ इसे नई साड़ी पहनाकर ले आवो।

इधर कुछ हल्ला का माहौल दिखा, तो आचार्यश्री बोले-

मैना! आज मैं तुम्हें आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत देकर सप्तम प्रतिमा के व्रत देता हूँ और निकट में दीक्षा भी हो जावेगी।

मामा खड़े-खड़े देखते रहे, वे स्तब्ध रह गये और कुछ नहीं समझ पाये कि क्या हो रहा है ? उसी समय माँ ने कहा-आज इसका जन्मदिन है आज यह अट्ठारह वर्ष की पूर्ण हुई है। इसके पहले मुझे ही नहीं मालूम था कि शरदपूर्णिमा का मेरा जन्मदिन है। आज मैंने अपना नया जन्म माना।

मैं व्रत ग्रहण कर एक साड़ी मात्र आर्यिका जैसी ही पहने हुए थी और माँ के साथ आकर बगीचे के मंदिर में बैठकर माला फेरने लगी।

मैं भाद्रपद कृ. 4 को घर से आई थी तब मात्र सोने के लिए रात्रि में कपूरचंद की पत्नी भाभी के साथ उनके घर जाती थी व प्रातः स्नान करके आकर दिनभर बगीचे के मंदिर में ही बैठी रहती थी। उन दिनों मैंने द्रव्यसंग्रह, दशभक्तियाँ, धनंजयनाममाला आदि अनेक विषय स्वयं पढ़कर कंठाग्र-याद कर लिए थे व अधिकतम महामंत्र की माला जपती रहती थी।

भाद्रपद, आश्विन व कार्तिक ऐसे प्रायः तीन माह का समय मेरा इस बगीचे के मंदिर में ही व्यतीत हुआ है। चातुर्मास समाप्ति के बाद–

यहाँ से आचार्यश्री का विहार लखनऊ हो गया वहाँ डालीगंज में व चारबाग के मंदिर में आचार्यश्री रहे हैं। वहीं एक कमरे में मैं व लखनऊ की एक महिला हम दोनों एक साथ रहते थे। बाराबंकी में आश्विन शु. 14 के दिन ही मेरे पिताजी मोह से अशांतमना कहीं चले गये थे।

इधर मेरे पिता जी ढाई दिन में 'वारिनबाग' एक छोटा सा गांव हैं, वहाँ जंगल में बैठे रोते हुए मिले थे। मेरे ताऊजी बब्बूमल जी उन्हें लेकर आये थे। वे मेरे से बोले-

बिटिया! अब टिकैतनगर चलो, वहाँ मंदिर में ऊपर के कमरे में रहना हम तुम्हारी पढ़ाई के लिए एक विद्वान बुला देंगे। तुम घर में नहीं आना, कहीं भी निमंत्रण से भोजन कर लेना.....।

मैं उन्हें समझा-बुझाकर शांत किया करती थी। वे घर चले गये और लोगों ने बताया कि जब दश, ग्यारह बजे दुकान से भोजन करने आते हैं, तो चाबी एक तरफ पटककर जोर-जोर से रोने लगते हैं.....अरे बिटिया मैंना! अरे बिटिया मैंना! कहाँ हो....., आवो आवो.....। बड़ी मुश्किल से शांत होकर भोजन करते हैं.....।

इधर सवा दो वर्ष का भाई रवीन्द्र भी मैंना की याद में रो-रोकर बीमार पड़ गया.....। यहाँ तक गाय जो अहाते में थी, उसे मैं घर में प्रायः हाथ से रोटी खिलाया करती थी। मैंने सुना कि वह भी रोया करती थी। उसके बड़े-बड़े आंसू गिरते रहते थे। पिताजी कई बार बाराबंकी आये, लखनऊ पहुँचने पर मेरे पास भी आये और कहते रहते थे...।

बिटिया मैना! चलो तुम टिकैतनगर में मंदिर में रहना, घर में नहीं आना। बस मैं तुम्हें दिन में एक बार देख लिया करूँगा, संतोष हो जावेगा.....। माता-पिता केवल मोह में अशांत रहते थे, विरोधी नहीं थे, चूँकि वे मेरे वैराग्य, ज्ञान और सम्यक्त्व को अच्छी तरह से जानते थे।

बाराबंकी में माता-पिता ने साथ में जो बालक-बालिकाओं के साथ थी, फोटो कराया था, वह अनेक ग्रंथों में छप चुका है।

जब तक मैं बाराबंकी में रही, वहाँ दिन भर अधिक समय बगीचे के

मंदिर में ही बैठती थी व रात्रि में पिताजी की बुआ के घर कपूरचंद जो बुआ के पोते थे, उनकी पत्नी के पास ही सोती थी।

बाराबंकी से वर्षायोग के बाद आचार्यश्री का विहार होकर कुछ माह लखनऊ रहे हैं पुनः राजस्थान की ओर महावीर जी क्षेत्र की वंदना के लिए विहार हो गया। वहाँ फाल्गुन की आष्टान्हिका में मैंने पुनः दीक्षा की याचना की।

इसके पूर्व सोनागिरि तीर्थ पर भी मैं चंद्रप्रभ भगवान के सामने प्रार्थना किया करती थी-

भगवन्! मुझे शीघ्र ही दीक्षा प्राप्त हो आदि।

आचार्यश्री ने यहाँ संघपति श्रेष्ठी सीमंधर जैन से परामर्श करके चैत्र कृष्णा प्रतिपदा[1] को दीक्षा का मुहूर्त निश्चित कर दिया।

यहाँ कृष्णाबाई जी के आश्रम में एक क्षुल्लिका ब्रह्ममती जी थीं, वे मेरे पास आकर रहने लगीं!

यहाँ महावीर जी के मंदिर परिसर में विशाल पांडाल में मेरी दीक्षा हो गई। आचार्यश्री ने मेरी वीरता व पुरुषार्थ से प्रभावित होकर मुझे 'वीरमती' नाम प्रदान किया। मेरे मनोरथ सफल हो गये, जो कि दशों वर्षों से चल रहे थे। सन् 1934 में मेरा जन्म हुआ था।

दीक्षा के बाद 7-8 दिनों में ही वहाँ आचार्यकल्प श्री वीरसागर जी महाराज ससंघ आ गये। दर्शन करके कुछ अभूतपूर्व ही आनंद हुआ था। दोनों संघों का बहुत ही अभूतपूर्व मिलन रहा थ। एक मंच पर साथ ही बैठकर प्रवचन भी होते रहते थे। चैत्र शु. 15 का महावीर जी का बड़ा वार्षिक मेला सम्पन्न हुआ। इस बीच संघ की आर्यिकाएं इतनी छोटी उम्र में मुझे देखकर आश्चर्य के साथ बहुत ही वात्सल्य-प्रेम दर्शाती थीं। एक दिन कहने लगीं-

आचार्यसंघ अभी टिकैतनगर होकर आया है। वहाँ भगवान नेमिनाथ को वेदी में आचार्यकल्प श्री वीरसागर जी के हाथ से विराजमान कराया है।

तुम्हारे पिता व माता बहुत रोते थे, वे कहते थे–

माताजी! आप लोग उसे संघ में रख लेना, संभाल लेना, छोटी सी बालिका है, उसका संरक्षण करना.....आदि।

---

1. सन् 1953 में दीक्षा हुई है।

उस समय मुझे क्या पता था कि ये महागुरु मुझे महाव्रत देकर मेरा 'ज्ञानमती' नाम रखेंगे.....।

इसके पूर्व 8 दिन बाद एक दिन मेरी माँ अपनी बहन के पुत्र-(लहरपुर के कुंजीलाल) के साथ (अशांतमना शांति की इच्छा से) यात्रा करते हुए अकेली यहाँ महावीर जी आईं। मेरे कमरे में आकर 'इच्छामि', कहकर जोर-जोर से रोने लगी। अरे! रे! आपने दीक्षा के समय हमें सूचना क्यों नहीं दी, हम लोग भी परिवार के जन दीक्षा देख लेते.....। वे दो तीन दिन वहाँ रहीं हैं, आहार आदि देकर कुछ चर्चा-वार्ता करके अपने भाई के साथ वापस चलीं गईं। घर में पिताजी आदि समाचार सुनकर सभी रोये व पुनः शांत होकर अपने-अपने काम में लग गये।

इधर आचार्यश्री देशभूषण महाराज के साथ मैं क्षुल्लिका ब्रह्ममती को साथ लेकर विहार करते हुए वापस लखनऊ आ गई।

यह सन् 1953 का आचार्यश्री देशभूषण जी महाराज के साथ मेरा दीक्षित जीवन का प्रथम वर्षायोग यहीं टिकैतनगर में हुआ है।

1. मेरे आराध्य भगवान के सामने की गई प्रतिज्ञा, प्रार्थना पूर्ण हुई। मैं पिच्छिका लेकर ही वापस आई हूँ, जो कि सन् 1952 में भाद्रपद कृ. 4 को प्रार्थना करके गई थी, अतः ये 'पार्श्वनाथ' भगवान चमत्कारिक-अतिशयकारी हैं, ऐसा मैं मानती हूँ।

2. बाराबंकी में आश्विन शु. 14 को जो मैंने चंद्रप्रभ भगवान के समक्ष सत्याग्रह-प्रतिज्ञा की थी कि व्रत-गृहत्याग करके ही मैं भोजन ग्रहण करूँगी। सो यह मेरा नियम भी प्रभु की कृपा से पूर्ण हुआ अतः मैं भगवान चंद्रप्रभ को भी पूर्ण अतिशयकारी मानती हूँ।

3. महावीर जी में-अतिशय प्रसिद्ध भगवान महावीर स्वामी की छत्रछाया में मुझे पिच्छिका प्राप्त हुई – संयम निधि मिली है। अतः मैं इनके अतिशय को स्वयं अनुभव कर चुकी हूँ।

इन भगवान पार्श्वनाथ को, भगवान चंद्रप्रभ को व भगवान महावीर स्वामी को अनंत-अनंतबार नमोस्तु करते हुए प्रार्थना करती हूँ–

श्री पार्श्वजिन चंद्रप्रभ, महावीर भगवान।
नमूँ अनंतों बार तुम्हें, पाऊँ सिद्धिस्थान।।1।।

प्रशस्ति

-दोहा-

चौबीसों तीर्थेश को, नमूँ नमूँ नत माथ।
गौतम गणधर को नमूँ, नमूँ सरस्वति मात।।1।।

पार्श्वनाथ तीर्थेश को, नमूँ अनन्तों बार।
चंद्रप्रभ, महावीर को, नमूँ भक्ति उरधार।।2।।

कुंदकुंद आम्नाय में, गच्छ सरस्वती मान्य।
बलात्कारगण सिद्ध है, उनमें सूरि प्रधान।।3।।

सदी बीसवीं के प्रथम, शांतिसागराचार्य।
उनके पट्टाचार्य थे, वीरसागराचार्य।।4।।

बाराबंकी नगर में, जिनमंदिर जगवंद्य।
इन्द्रध्वज सुविधान यहाँ, अतिशयकारी धन्य।।5।।

वीर अब्द पच्चीस सौ, पैंतालिस जग मान्य।
आश्विन शुक्ला पूर्णिमा, किया संकलन अन्त्य[1]।।6।।

टिकैतनगर चौमास में, धर्मध्यान के मध्य
श्री चंद्रप्रभस्तुती, संग्रह रचना धन्य।।7।।

जब तक जग में धर्म है, जब तक नभ में सूर्य।
तब तक जिनमंदिर रहें, करें मनोरथ पूर्ण।।8।।

गणिनी ज्ञानमती रचित, 'स्तुतिसंग्रह' ग्रंथ।
भविजन को हो पुण्यप्रद, सबको दे शिवपंथ।।9।।

।।इति चन्द्रप्रभस्तुति संग्रह प्रशस्ति पूर्ण।।

1. टिकैतनगर में सन् 2019 के चातुर्मास में।

कु. मैना एवं माता मोहिनी का संवाद

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

(बाराबंकी में शरदपूर्णिमा, सन् 1952 की पूर्व बेला-चतुर्दशी की रात्रि में कु. मैना और माता मोहिनी का पारस्परिक संवाद)

इक रात को इक माता पुत्री का आपस में संवाद चला।
तुम राग विराग कथाएं सुनकर बोलो किसका स्वाद भला।।टेक.।।

मां 'मोहिनी' थी बेटी 'मैना' दोनों ममता की मूरत थीं।
ममकार नहीं था दोनों में केवल मकार की सूरत थीं।।
'मैं ना' संज्ञा सार्थक करने हेतू मैना का स्वर बदला।।तुम.।।1।।

माता की ममता पिघल पिघल कर आँसू बनकर निकल रही।
बेटी का दृढ़ निश्चय सुनकर मोहिनी और भी विकल हुई।।
मां बोली कच्ची कली मेरी तू क्या जाने परिणाम भला।।तुम.।।2।।

पुत्री बोली कच्ची कलियों ने भी यह त्याग निभाया है।
देखो ब्राह्मी माँ चन्दनबाला ने इतिहास बनाया है।।
मैं भी वह पथ अपनाऊंगी दो आज्ञा माँ! इक बार भला।।तुम.।।3।।

जैसे जम्बूस्वामी ने अपनी चार पत्नियों के संग में।
वैराग्य कथा जारी रक्खी नहिं रमें रानियों के रंग में।।
फिर प्रातः महल तजा उनने दीक्षा लेकर जीवन बदला।।तुम.।।4।।

वैसे ही मैना ने अपनी माता को कथा सुनाई थी।
श्री पद्मनन्दि आचार्य रचित दुर्लभ पंक्तियां सुनाई थीं।।
मां कबसे हम सबका चारों गतियों में परिवर्तन न टला।।तुम.।।5।।

कभी इन्द्र का पद पाया मैंने कभी नरक निगोदों में भटका।
तिर्यंच मनुज पर्यायों में बस यूँ ही पड़ा रहा अटका।।
बहु पुण्ययोग से श्रावक कुल में सच्चे ज्ञान का दीप जला।।तुम.।।6।।

मां बोली ये सब शास्त्रों की बातें तुमने अपना ली हैं।
पर सदी बीसवीं में बोलो किस कन्या ने दीक्षा ली है।।
तुम जैसी सुकुमारी कन्या के बस की नहीं विराग कला।।तुम.।।7।।

फिर एक चुनौती प्यार भरी दे मैना मां से बोल पड़ी।
यदि तुम मेरी सच्ची मां हो तो दे दो स्वीकृति इसी घड़ी।।
हे मां! अब तक तो ममता दी अब समता की नव ज्योति जला।।तुम.।।8।।

विश्वास मात को था मेरी बेटी दृढ़ नियम निभाएगी।।
पर सोच रही मेरी बच्ची कैसे यह सब सह पाएगी।
इतिहास अगर यह रच देगी तो बालाओं का मार्ग खुला।।तुम.।।9।।

सच्ची मां का कर्तव्य सोच माता ने स्वीकृति दे डाली।
अवरुद्ध कंठ से बोल पड़ीं बेटी मैं बड़ी भाग्यशाली।।
हो गई विजय वैराग्य पक्ष की राग मोह तब हार चला।।तुम.।।10।।

वैराग्य के ये अंकुर मैना ने बचपन से ही उगाए थे।
उनको पुष्पित करने मानो इक मुनिवर अवध में आए थे।।
बाराबंकी में देशभूषणाचार्य गुरू का संग मिला।।तुम.।।11।।

सन् बावन की आश्विन शुक्ला चौदश रात्री की यह घटना।
तब शरदपूर्णिमा को प्रातः मैना ने पूर्ण किया सपना।।
निज जन्मदिवस ही ब्रह्मचर्यव्रत पा मानो शिवद्वार खुला।।तुम.।।12।।

मां बेटी की ये चर्चाएं जग को आदर्श सिखाती हैं।
कर सको न यदि तुम त्याग तो पर को मत रोको समझाती हूँ।।
"चन्दनामती" उस माँ ने पुनः अपने जीवन को भी बदला।।तुम.।।13।।

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य
चारित्रचक्रवर्ती
श्री शांतिसागर जी महाराज

आचार्य श्री शांतिसागर जी के
प्रथम पट्टाधीश एवं पूज्य गणिनी
श्री ज्ञानमती माताजी के आर्यिका दीक्षागुरु
आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परमपूज्य

गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

978-93-87891-36-4